RNI नं. : 7387/63
मुद्रण तिथि : 15-16 अक्टूबर 2024
डाक प्रेषण तिथि : 15-17 अक्टूबर 2024
ISSN : 2456-611X

वर्ष : 62 अंक : 13
मूल्य : ₹10/- पृष्ठ संख्या : 72
डाक पंजीयन संख्या : BIKANER/022/2024-26
Office Posted at R.M.S., Bikaner

राम चमकते भानु समाना

श्री अ.भा. साधुमार्गी जैन संघ का मुखपत्र

श्रमणोपासक

धार्मिक पाक्षिक

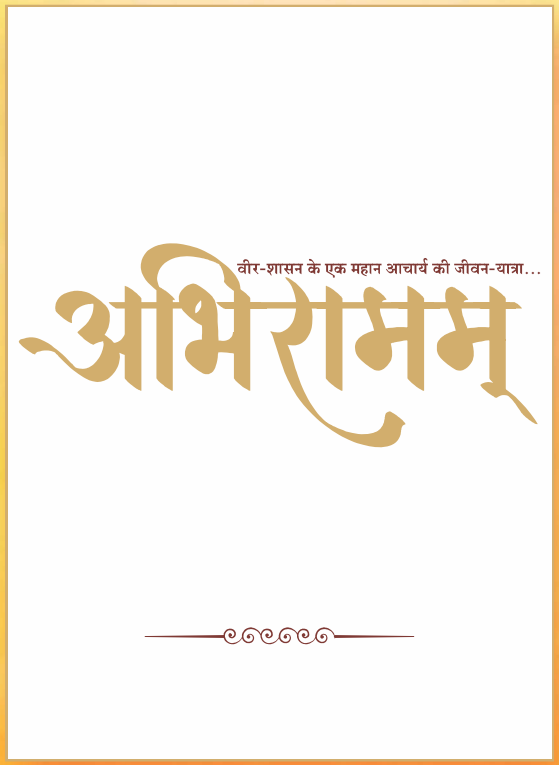

सफलता के लिए संघर्ष नहीं,
समर्पित होना जरूरी है।

तुम्हारी कठिनाई
तुम्हारी समझ के कारण है।

किसी से अनबन हो जाने पर
वहाँ खाना खाओ या न खाओ,
पर गम अवश्य खाना।

-परम पूज्य आचार्य प्रवर 1008 श्री रामलाल जी म.सा.

॥ आगमवाणी ॥

भावेज्ज अवत्थतियं, पिंडत्थ-पयत्थ-रूवरहियत्तं।
छउमत्थ-केवलित्तं, सिद्धत्तं चेव तस्सत्थो।।

ध्यान करने वाला साधक पिंडस्थ, पदस्थ और रूपातीत, इन तीनों अवस्थाओं की भावना करे। पिंडस्थ ध्यान का विषय है - छद्मस्थत्व - देह विपश्यत्व। पदस्थ ध्यान का विषय है केवलित्व - केवली द्वारा प्रतिपादित अर्थ का अनुचिंतन और रूपातीत ध्यान का विषय है सिद्धत्व - शुद्ध आत्मा।

The aspirant aspiring to establish himself in meditation must contemplate all three of its stages, namely pindastha (physical), padastha (scriptural) and rupateeta (formlessness). The subject of the first type of contemplation is the unenlightened state (Chhadmasthatva), that of the second kind is the enlightened omniscient state (kevalitva) and the subject of the third kind of contemplation is formlessness or incorporeal state (Siddhatva).

जहचिरं संचियमिंधण-मनलो, पवण सहिओ दुयं दहइ।
तह कम्मेधणममियं, खणेण झाणानलो डहइ।। -ध्यानशतक (101)

जैसे चिर संचित ईंधन को वायु से उद्दीप्त आग तत्काल जला डालती है, वैसे ही ध्यान रूपी अग्नि अपरिमित कर्म-ईंधन को क्षणभर में भस्म कर डालती है।

As the fuel (firewood) accumulated over a long period of time is soon burnt by the flaming fire, so the fire of meditation soon burns the long accumulated fuel of karma.

काउस्सग्गेणं तीयपडुप्पन्नपायच्छित्तं विसोहेइ विसुद्धपायच्छित्ते य जीवे निव्वुयहियए ओहरियभरुव्व भारवाहे पसत्थज्झाणोवगए सुहं सुहेणं विहरइ।।

-उत्तराध्ययन (29/12)

कायोत्सर्ग (ध्यान अवस्था में समस्त चेष्टाओं का परित्याग) करने से जीव अतीत एवं वर्तमान के दोषों की विशुद्धि करता है और विशुद्ध प्रायश्चित्त लेकर सिर से भार उतर जाने से भारवाहकवत् हलका होकर सद्ध्यान में रमण करता हुआ सुखपूर्वक विचरता है।

By observing kayotsarga (the state of contemplation in which one loses one's body-consciousness) one purifies the flaws of the past and the present. Having, thus, shed the weight off one's head by such explation, he goes about happily by immersing himself in pious contemplation.

चित्तस्सेगग्गया हवइ झाणं।

-आवश्यकनिर्युक्ति (1456)

किसी एक विषय पर चित्त को एकाग्र-स्थिर करना ध्यान है।

Meditation is nothing but to concertrate one's mind on one subject.

ध्यान तु विषये तस्मिन्नेकप्रत्ययसंततिः।

-अभिधानचिंतामणि (1/84)

ध्येय में एकाग्रता का हो जाना ध्यान है।

Concentrations on the object itself is meditation.

साभार- प्राकृत मुक्तावली

राम चमकते भानु समाना

अनुक्रमणिका

धर्मदेशना

08 **आत्मकल्याण का मार्ग** ..... – आचार्य श्री रामलाल जी म.सा.

11 **अतीत के मोती : प्रार्थना की महिमा** ..... – युवाचार्य श्री राम
(वर्तमान आचार्य प्रवर 1008 श्री रामलाल जी म.सा.)

ज्ञान सार

14 **आध्यात्मिक आरोग्यम्** ..... – संकलित

19 **श्रीमत् प्रज्ञापनासूत्र प्रश्नमाला** ..... – कंचन कांकरिया

21 **श्रीमद् उत्तराध्ययनसूत्र** ..... – सरिता बैंगानी

संस्कार सौरभ

24 **धर्ममूर्ति आनंद कुमारी : क्षमाशील प्रकृति** ..... – संकलित

29 **दोषी कौन?** ..... – परम पूज्य आचार्य प्रवर 1008 श्री नानालाल जी म.सा.

31 **महत्तम निर्जरा : आत्म जागृति** ..... – पदमचंद गाँधी

34 **महत्तम आनंद के सिद्धांत** ..... – विनयचंद चोपड़ा

39 **महत्तम भाव** ..... – डॉ. आभाकिरण गाँधी

41 **अनेकांत का दार्शनिक दृष्टिकोण** ..... – प्रो. सुमेरचंद जैन

43 **आवश्यक साधना है प्रतिक्रमण** ..... – डॉ. दिलीप धींग

45 **महत्तम आनंदानुभूति** ..... – सुरेश बोरदिया

भक्ति रस

42 **विवेक : तीसरा नेत्र** ..... – आर.एल. धींग

50 **आत्म-जागृति** ..... – राखी अलिझाड़

51 **गुरु महिमा** ..... – प्रीति पितलिया

53 **स्वाध्याय : छब्बीस नारे** ... – डॉ. दिलीप धींग

64 **यादें** ..... – जौहरीमल सुराणा

विविध

27 **बालमन में उपजे ज्ञान**
– मोनिका जय ओस्तवाल

54 **भीलवाड़ा चातुर्मास समाचार**
– महेश नाहटा

गर्व गलाता ज्ञान

-परम पूज्य आचार्य प्रवर 1008 श्री रामलाल जी म.सा.

ज्ञानी को गर्व नहीं होता। ज्ञान जितना गहरा होगा व्यक्ति उतना ही धीर-गंभीर होता चला जाएगा। छलकना अल्प में ही होता है। **'पूर्ण घटो न करोति शब्दम्'** पूरा भरा हुआ घड़ा शब्द नहीं करता। ज्ञानी भी पूर्ण हो तो शब्द-गर्व करने का कोई तुक ही नहीं है। गर्व करने की बात ही क्या है? वहाँ उत्कर्ष पनपता ही नहीं। वह भूमि गर्व के लिए बंजर है। बंजर भूमि में फसल होगी ही कैसे? वस्तुतः ज्ञान, आत्मा के निकट ले जाता है। आत्मा के समीप पहुँचने पर उसमें अन्यथा भाव पैदा होगा भी कैसे?

ज्ञान का तात्पर्य क्या है? क्या कुछ थोकड़े, शास्त्र कंठस्थ कर लेने से ही कोई ज्ञानी हो जाता है? यदि ऐसा हो तो अभवी ज्ञानी क्यों नहीं हो सकते? वे भी तो नौ पूर्वों से ज्यादा ज्ञान अर्जित कर लेते हैं, लेकिन उन्हें हम ज्ञानी नहीं कहते। आखिर क्यों? हम कह सकते हैं कि उन्होंने मिथ्यात्व को छोड़ा नहीं या मिथ्यात्व उनसे छूटा नहीं। अतः वे ज्ञानी नहीं हो सकते। यद्यपि अक्षर ज्ञान की दृष्टि से वे भी ज्ञानी हैं, किंतु ज्ञानी के लिए केवल अक्षर ज्ञान पर्याप्त नहीं होता। उसके लिए अलग से कसौटी निर्धारित है, जिस पर कसे जाने पर ही वह ज्ञानी सिद्ध हो सकता है। वह कसौटी है आत्म-अनुभूति की। आत्म-अनुभूति जिन्होंने पा ली, वे ज्ञानी होते हैं। अपनी पहचान ज्ञानी के लिए जरूरी है। आत्म-परिचय के बिना बाहरी ज्ञान कितना भी हो उससे ज्ञानी बनने की शर्त पूरी नहीं हो पाती। ज्ञानी बनते ही उसकी जीवनचर्या परिवर्तित हो जाती है, जैसे सम्यक्त्व आते ही अनंतानुबंधी कषाय दूर हो जाता है। उसके दूर होते ही जीवन सरलता की तरफ बढ़ने लगता है। अतः ज्ञान और गर्व का पारस्परिक मेल ही नहीं है। यदि कोई ज्ञान का गर्व करता है तो समझना चाहिए कि अभी सागर की गहराई में वह नहीं उतर पाया है। वह अभी मात्र लहरों में जी रहा है। सागर की गहराई में उतरे बिना सागर को क्या जाना जा सकेगा? वैसे ही आत्मा की गहराई को जाने बिना ज्ञानी हो नहीं सकता। अक्षर ज्ञान से भी कई बार देखा जाता है कि व्यक्ति गर्व को गला देता है। जब अक्षर ज्ञान से भी ऐसा हो सकता है तो आत्मज्ञान में तो गर्व को कहीं भी अवकाश प्राप्त नहीं हो सकता।

कार्तिक कृष्ण 13, सोमवार, 09-11-2015

साभार- ब्रह्माक्षर

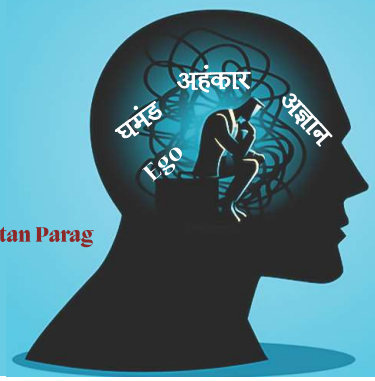

PRIDE DISSOLVES KNOWLEDGE

-Param Pujya Acharya Pravar 1008 Shri Ramlal Ji M.Sa.

One who is wise has no pride. The more profound one's knowledge, the more sober and solemn one will become. Spillage marks the shallow. **'Poorna ghato na karoti shabdam'** (Or, the pot filled to the brim hardly makes any sound.)

If the wise man is fully accomplished, there would be no point to his having conceit of verbiage. What is there to be vain about? Excellence simply does not flourish there. Pride makes the land fallow. And how can barren soil yield crop? Knowledge, in fact, takes one closer to the soul. And having reached the soul's proximity, there will be no question of any other disposition raising its head.

What is the import of **knowledge**? Could one become wise if one merely learns by heart a few **'thokde'** (collections of Jain metaphysical material) or memorises scriptural writings? If this was so, why cannot an **'abhavi'** (or a soul ever mired in the cycle of birth and death) become wise? They also acquire knowledge exceeding that contained in the nine **'purvas'** (Jain canonical texts), but we do not call them wise. Why? We may say that they have not yet rid themselves of **'mithyatva'** (or, false belief), or **'mithyatva'** has not gotten out of them. As such, they cannot be deemed wise. They might be learned from the standpoint of scriptural knowledge though, but that by no means is enough for being called **'wise'**. A different touchstone is prescribed for them and they qualify as wise only when tested on that touchstone. That touchstone is self-experience. Only those are wise who have attained to self-experience. The wise man must know himself.

Sans self-knowledge, the condition for being deemed wise is not met, irrespective of the extent of one's external knowledge. No sooner does one become wise than one's life routine is transformed, just as one's **'kashayas'** that enchain one to endless worldly lives come to nought upon attainment of equanimity (**'Kashayas'**, loosely translated as 'passion', are 'anger', 'ego', 'deceit' and 'greed'). And with the annihilation of **'kashayas'** life progresses towards simplicity. As such, knowledge and ego are not mutually compatible. Should somebody pride himself on his knowledge, it may be supposed that he has not fathomed the depths of the ocean (of knowledge). He is merely afloat on the waves. Is it ever possible to know the ocean without tapping its depths? Likewise, without knowing the profundity of the soul, none can become wise.

It is often observed that even upon acquiring scriptural knowledge, a person can sweep away pride. When scriptural knowledge can produce such an outcome, self-knowledge would just afford no room for any trace of pride.

Monday, 09-11-2015 Courtesy- Brahmakshar

आवरण

दीपै चाम चादर मढ़ी, हाड़ पिंजरा देह।
भीतर या सम जगत् में, और नहीं घिन गेह।।

शरीर की अपवित्रता का चिंतन करना अशुचि भावना है क्योंकि व्यक्ति का सबसे ज्यादा ममत्व शरीर पर ही होता है और इसी ममत्व के वशीभूत वह पग–पग पर पापकर्म करता है। इतना ही नहीं, वह अपनी आत्मा को मलिन करता है और उस पर एक कृत्रिम अच्छाई का आवरण ढक लेता है, जिससे वह स्वयं ही दिग्भ्रमित होता रहता है।

एक शोध के अनुसार इस शरीर में आठ सेर खून, चार सेर चर्बी, दो सेर मस्तिष्क का मज्जा, आठ सेर मूत्र, दो सेर विष्ठा, आधा सेर नाक की अशुचि, पाव सेर वीर्य भरा हुआ है एवं बाकी हड्डियों का वजन है। यह सारा अशुचि द्रव्य चमड़ी के आवरण से ढका हुआ है। हम सभी भली–भाँति परिचित हैं कि यदि इनमें त्याज्य अशुचियों का समय पर त्याग नहीं किया जाए तो हमारे शरीर की क्या स्थिति हो जाती है। हमें कितनी तकलीफों का सामना करना पड़ता है। इन सब बातों की हमको समझ तो है, लेकिन इन बातों पर हमारा चिंतन कभी नहीं चलता और यदि कभी महापुरुषों का मार्गदर्शन मिलने पर चिंतन चलता भी है तो वह चिंतन दीर्घ यात्रा तय नहीं कर पाता। इस कारण हमारा बाह्य दृष्टि वाला ममत्व भाव पुरजोर प्रयास करता है इस आवरण को सुरक्षित रखने का। परंतु इसकी सुरक्षा भी तब ही संभव है जब तक शुभ कर्मों का उदय है।

प्रत्येक व्यक्ति को यह ज्ञान है कि यह शरीर मात्र सजने–संवरने हेतु नहीं मिला है। यह शरीर मिला है हमारे द्वारा भव–भवांतर में किए गए कर्मों की निर्जरा करने के लिए। इस शरीर की सारभूतता तत्त्वद्रष्टा ही समझ सकता है। आत्मा से परमात्मा बनने का एक मात्र साधन यह शरीर है। मानव शरीर में रही हुई आत्मा ही मोक्षगामी बन सकती है।

परम पूज्य आचार्य भगवन् एवं अन्य चारित्राशील साधु–साध्वी जी आदि इस शरीर से ममत्व हटाने हेतु समय–समय पर हमें प्रेरित करते रहते हैं। विभिन्न त्याग–प्रत्याख्यान, तपश्चर्याओं के माध्यम से कर्मनिर्जरा हेतु मार्गदर्शन प्रदान करते हैं, लेकिन हम न जाने किस दिशा में बढ़ रहे हैं। कहीं हम अपने मूल लक्ष्य से भटक तो नहीं रहे हैं? इस ओर चिंतन अवश्य करें।

इस शरीर की प्राप्ति का प्रयोजन समझें व उसे सिद्ध करने हेतु प्रचुर मात्रा में पुरुषार्थ करें क्योंकि आर्य क्षेत्र, उच्च कुल, जैन धर्म, जिनवाणी श्रवण का सौभाग्य पुण्यवानी से ही प्राप्त होता है। इस अपूर्व अवसर का लाभ उठाएँ व अधिकाधिक धर्म आराधना कर जीवन धन्य बनाएँ। इन्हीं शुभभावनाओं के साथ...।

–सह–संपादिका

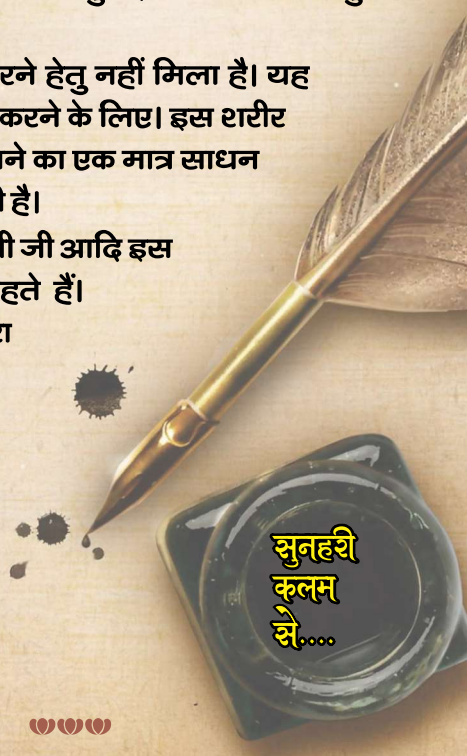

आत्मकल्याण का मार्ग

-परम पूज्य आचार्य प्रवर 1008 श्री रामलाल जी म.सा.

जय जय जय भगवान...।

सिद्ध भगवान की स्तुति हृदय कमल को विकसित करने वाली है। हमारे हृदय के भीतर वह सिद्ध स्वरूपी आत्मा विराजमान है और सिद्ध भगवान की स्तुति उसे जागृत करने, विकसित करने में सहयोगी होती है। प्रत्येक भव्यात्मा चाहती है कि उसे सिद्धि मिले, परंतु सिद्धि ऐसे ही नहीं मिलती, उसकी प्राप्ति का मार्ग भी बताया गया है। तीर्थंकर देवों ने सिद्धि प्राप्ति के लिए साधु-साध्वी, श्रावक-श्राविका रूपी चतुर्विध संघ की स्थापना की है, क्योंकि यदि संघ होता है तो आबाल-वृद्ध उसमें रहकर संयम की साधना कर सकते हैं। एकल-विहारी अवस्था से भी साधना हो सकती है, किंतु एकल विहार स्वीकार करने की क्षमता व अपेक्षित गुण होने पर ही वह स्वीकार हो सकता है।

तीर्थंकर स्वयंखोजी होते हैं, वे खोज करते हैं और केवलज्ञान का आलोक प्राप्त होने पर देखते हैं कि संघबद्ध अवस्था ही महत्त्वपूर्ण है, क्योंकि उसमें रहकर बालक-वृद्ध सभी का कल्याण हो सकता है। उसमें तीर्थंकर भगवंतों के समय में गणधरों की व्यवस्था रही थी और उसके बाद आचार्यों की परंपरा चली। स्वयं भगवान महावीर ने पंचम गणधर सुधर्मा स्वामी को आचार्य पद पर प्रतिष्ठित किया था। उसी अनुक्रम में यह निर्ग्रंथ श्रमण संस्कृति निरंतर गतिशील रही है। इसमें बीच-बीच में उतार-चढ़ाव आए, ह्रास की स्थितियाँ भी आईं और क्रांतिकारी आचार्यों ने इसे उन्नत भी किया। उसमें आचार्य पूज्य श्री हुक्मीचंद जी म.सा. और आचार्य श्री रतनचंद जी म.सा. आदि ने उत्क्रांति के स्वर मुखरित कर इस संस्कृति को विकास की दिशा में आगे बढ़ाया। यहाँ बैठे लोगों में शायद ही कोई ऐसा हो जिसने उनके नाम नहीं सुने हों।

युगद्रष्टा ज्योतिर्धर जवाहराचार्य राष्ट्रसंत थे। राष्ट्रसंत होना कोई छोटी बात नहीं है। जैसे आज कोई व्यक्ति डॉक्टर की डिग्री प्राप्त कर लेता है और उसे उपाधि मिल जाती है, वैसी कोई डिग्री उन्हें प्राप्त नहीं थी। किंतु जिस समय देश गुलामी के बंधनों में जकड़ा हुआ था, उस समय आचार्य जवाहर ने उत्क्रांति का शंखनाद किया। उन्होंने कहा—''बंधुओ! गुलामी में रहकर धर्म आराधना कैसे हो सकती है? स्थानांग सूत्र में दस धर्म बताए गए हैं- ग्रामधर्म, नगरधर्म, राष्ट्रधर्म आदि। यदि इनकी व्यवस्था सही नहीं हो, चारों तरफ धारा 144 लगी हुई हो, आतंकवाद छाया हो, कर्फ्यू लगा हो तो उस स्थिति में व्यक्ति कैसे धर्म आराधना करे?'' इसलिए उन्होंने कहा कि ये व्यवस्थाएँ सही होनी

चाहिए। आपका ही जूता आपके माथे पर पड़ रहा है। आप विदेशी वस्त्र पहनते हैं, उसकी मेहनत देशी करते हैं और उसका मुनाफा विदेशियों को मिलता है। उन्होंने खादी के उपयोग का उपदेश दिया।

वे जब रतलाम पधारे थे तब वहाँ के नरेश भी व्याख्यान में आए थे। तब लोगों ने कहा था कि नरेश खादी के कट्टर विरोधी हैं, अत: आप खादी की हिमायत न करें। आचार्यदेव ने कहा था—जैसा द्रव्य, क्षेत्र, काल, भाव बनता है वैसा हम सोचते और कहते हैं। आचार्यदेव ने खादी का ऐसा विवेचन प्रस्तुत किया कि नरेश ने उसी समय खादी के उपयोग की प्रतिज्ञा ले ली थी। यह था महान संत का प्रभाव। ऐसे एक नहीं अनेक प्रसंग हैं, जिनका मैं विवरण नहीं दे सकता।

आचार्य श्री जवाहर का उदयपुर में चातुर्मास था। उस समय कॉन्फ्रेंस के अध्यक्ष हेमचंद भाई दर्शनार्थ उपस्थित हुए। लोगों ने स्वागत किया। जब ऑल इंडिया स्तर के नेता आते हैं तो स्वाभाविक भी है कि लोग उनका स्वागत करें। उस समय उन्होंने कहा कि यह भारतीय संस्कृति है, पाश्चात्य नहीं। भारतीय संस्कृति में नारी जिसके गले में माला डाल देती है, उसका साथ कभी नहीं छोड़ती। आपने अध्यक्ष बनाया है, बनाने का मतलब यह नहीं कि मंच पर माला पहना दी और पीछे टाँग खींचकर नीचे उतार दें। वह पाश्चात्य संस्कृति है, जिसमें आज शादी, कल तलाक की बात होती है। आज जिन्हें बड़े जोर-शोर से अध्यक्ष पद पर मनोनीत करते हैं, कल पीछे से उन्हीं की टाँग खींचते हैं।

बंधुओ! चिंतन का प्रसंग है कि हम स्वयं जवाहर किरणावली पढ़ें, उसके अनुरूप चिंतन करें और जीवन ढालें तो कल्याण-मार्ग प्राप्त कर सकते हैं। नहीं तो, गाड़ी दौड़ रही है, एक प्रवाह चल रहा है। जैसे नदी का प्रवाह समुद्र में जा मिलता है वैसे ही चतुर्गति रूप संसार-समुद्र में परिभ्रमण करते रहेंगे। कषाय बढ़ता है, राग-द्वेष बढ़ता हैं तो वह संसार को बढ़ाने वाला बनता है। हमारा स्वरूप शांत-प्रशांत होना चाहिए, समभावमय होना चाहिए। हम देखें कि हम किस प्रकार की स्थिति में चलते हैं।

आज मैं आचार्य जवाहर की बात क्यों कर रहा हूँ? आज उनकी पुण्यतिथि है। इसलिए उनकी कुछ बातें आपके सामने रखीं। उन्हीं के पाट पर विराजित हुए आचार्य गणेश, जिन्होंने कहा—''मुझे पद नहीं, संयम से प्यार है। बिना संयम के हजारों की टोली लेकर चलूँ तो मुझे आत्मसंतुष्टि नहीं मिलेगी।'' वृद्धावस्था में कैसा क्रांतिकारी कदम उठाया था उन्होंने! आज की दुनिया भले ही कुर्सी की ओर भागे, पर उन्होंने निर्ग्रंथ श्रमण संस्कृति की रक्षा के लिए कदम उठाया था।

आचार्य जवाहर ने नक्शा बनाया, आचार्य गणेश ने नींव भरी और आचार्य श्री नानेश ने भव्य भवन निर्मित कर दिया। हम उसमें आराम से बैठे हैं। पुरुषार्थ किनका हुआ? नक्शा बनाना भी कोई छोटी बात नहीं है। बड़ी सूझबूझ, तकनीकी ज्ञान और दूरदृष्टि की जरूरत होती है उसमें। सार्थक जीवन का नक्शा बनाना भी ऐसा ही श्रमसाध्य कार्य है। हम स्थानकवासी समाज की उन्नति चाहते हैं तो एक नेतृत्व में चलें। यदि एक नेतृत्व में चल लेंगे, संगठित हुए तो एक रूप सामने आएगा। संवत् 1990 में अजमेर सम्मेलन में उन्होंने नक्शा प्रस्तुत किया और लगभग 19 वर्षों के बाद सादड़ी सम्मेलन में अनेक संप्रदायों के मुनियों का सम्मेलन हुआ। उन प्रतिनिधि मुनियों ने अपने-अपने पदों का त्याग किया और उस समय ऐसी सोच बनी कि एक का नेतृत्व होना चाहिए। सर्वानुमति से आचार्य श्री गणेशलाल जी म.सा. को नवनिर्मित श्रमण संघ का नेतृत्व सौंपा गया। वैशाख शुक्ला अष्टमी को वहाँ प्रतिनिधि मुनियों ने उनको चादर ओढ़ा दी और उनकी गोद में अपने प्रतिज्ञा-पत्र सौंपे। समय बदला, मानसिकताएँ बदलीं। आज क्या दृश्य सामने आ रहा है, मुझे कहने की आवश्यकता नहीं है। किंतु गणेशाचार्य ने अपनी जिंदगी के पिछले समय में उस नक्शे को अमली रूप दिया। उन्होंने संकल्प किया कि मुझे इसकी नींव भरनी है और उन्होंने नींव भरी। आचार्य श्री नानेश ने अथक परिश्रम करके, अपना खून-पसीना एक करके, दिन-रात की परवाह न करके संघ को सुव्यवस्थित करने में अपना जीवन लगा दिया। उस समय के श्रावकों का योगदान भी भुलाया नहीं जा सकता। क्योंकि बिना

श्रावकों के सहयोग के धर्म का यह रथ आगे बढ़ ही नहीं सकता था। दो पहियों पर रथ कैसे दौड़ सकता था? अकेले आचार्य का एक पहिया क्या कर सकता था? दो पहियों की साइकिल तो फिर भी कुछ दूर चल सकती है, परंतु यदि लंबी यात्रा करनी हो तो चार पहियों की आवश्यकता होगी ही। धर्मरथ को तो सतत चलते रहना होता है।

आचार्य श्री जवाहर के समय भैरूदान जी सेठिया, वर्धमान जी पितलिया और बहादुरमल जी बाँठिया जैसे कर्मठ श्रावक हुए थे। वे खड़े हो जाते थे तो लगता था, कोई आया है। आचार्य गणेश के समय भी हीरालाल जी नांदेचा, छगनलाल जी मूथा आदि कर्मठ श्रावक रहे थे। आचार्य श्री नानेश को जब युवाचार्य पद की चादर ओढ़ाई गई, उसी समय साधुमार्गी संघ के रूप में श्रावकों का एकीकरण भी किया गया। उस समय के श्रावकों में सेठ छनगलाल जी मूथा को शायद ही कोई विस्मृत कर सके। वे जीवनभर आचार्य श्री जवाहर से अनुप्राणित रहे। शुरू से अंत तक वे संघ से जुड़े रहे, पर कभी किसी पद की कामना नहीं की। वे कहते थे कि मुझे पद से क्या लेना, किंतु उनका वीटो पॉवर चलता था। मंच पर कोई भी चर्चा चल रही हो और यदि मूथा जी ने कुछ कह दिया तो वही सर्वसम्मति से मान्य हो जाता था। उनके बाद अनेक समर्पित श्रावकों ने निष्ठा के साथ संघ की सेवा की व कर रहे हैं। संघ सेवा के अनेक क्षेत्र हैं और संपूर्ण देश उनकी परिधि में आ जाता है। यह आचार्य श्री नानेश की निःस्पृह साधना का ही परिणाम है कि तीर्थंकर देवों द्वारा स्थापित यह चतुर्विध संघ एक है, कहीं कोई भेद नहीं है।

आचार्य श्री नानेश ने अपने त्याग और तप से यह भव्य भवन बनाया है। आप और हम जो उसमें बैठे हैं, उनसे प्रेरणा लेकर अपने जीवन को भव्य बनाएँ, उसका आनंद लेना सीखें और उसके साथ छेड़छाड़ न करें। विचार कीजिए कि आज आपके घरों में संगमरमर या ग्रेनाइट के पत्थर जड़े हैं, उन पर यदि कोई व्यक्ति हथौड़े से कील ठोकना चाहे तो वह चोट ग्रेनाइट पर लगेगी या आपके दिल पर लगेगी? क्या आप किसी को ग्रेनाइट पर कील ठोकने देंगे? आप तुरंत कहेंगे कि यह क्या कर रहे हो? आपका पत्थर से लगाव है। इसलिए जैसे आपका दिल दहल जाता है वैसे ही पूर्वाचार्यों द्वारा संघ रूपी भवन का यह जो व्यवस्थित रूप बनाया गया है, उस पर यदि कोई चोट करेगा तो वह चोट कहाँ लगेगी? आप अपना दिल टटोलकर उत्तर दें।

इस गुलाबी नगरी में बहुत से महापुरुषों के चातुर्मास हुए हैं। आचार्य श्री नानालाल जी म.सा. का चातुर्मास भी हुआ था। पहले होली चातुर्मास हुआ, फिर चातुर्मास हुआ। उस समय संस्था के जौहरियों ने कहा था—आपको विवाद निपटारा करने का निर्णय लेना है। तब आचार्यदेव ने कहा था—निर्णय मैं नहीं दे सकता। आप एक साथ बैठकर विचार कर लें। वे बैठे तो 60 प्रतिशत मुद्दा तो वैसे ही हल हो गया। **'सौ सेणों का एक मत और एक मूर्ख के सैकड़ों मत'** होते हैं। अब यह आप पर है कि आप किसे पसंद करते हैं। आप सब सयाने हैं इसलिए आपके साथ तो सौ सेणों का एक मत वाली बात ही लागू होगी।

मैं साधु बनने के बाद पहली बार जयपुर आया हूँ। पहले जब गुरुदेव के चातुर्मास में आया था तब कुछ नहीं जानता था। मुझे पूछा गया था गुरु आमना ली हुई है? मैंने कहा था—नहीं। यहीं मैंने गुरु आमना ली, फिर चला गया। चार माह बाद गुरुदेव के चरणों में आया, दो वर्ष रहा, फिर दीक्षा हो गई। यह बात तो आपको भली-भाँति ज्ञात है कि यहाँ बड़े-बड़े चातुर्मास हुए हैं, परंतु मुख्य बात चातुर्मासों की नहीं है, मुख्य बात है धर्म और संघ के प्रति उस समर्पणा की, जिससे ऐसे आयोजन सार्थक होते हैं। आचार्यदेवों ने हमको रास्ता दिखा दिया है, परंतु अपने उद्धार के लिए उस पर चलना तो हमें स्वयं को ही होगा। मैं पहले ही कह चुका हूँ कि तीर्थंकर देवों ने भव्य आत्माओं के उद्धार के लिए चतुर्विध संघ की स्थापना की है। सिद्धस्वरूपी यह आत्मा उस मार्ग पर निष्ठा एवं समर्पणा भाव के साथ चल सके, ऐसी स्थितियों का निर्माण हमें करना है। आप सभी जागृत एवं आत्मचेता सुश्रावक हैं, संयम-साधना की विधियों से आप परिचित भी हैं। मैं तो केवल सचेत बनाए रखने का काम कर सकता हूँ। आप से अभी इतना ही कहना पर्याप्त है।

साभार- श्री राम उवाच-07 (आत्मकल्याण का मार्ग)

प्रार्थना की महिमा

-युवाचार्य श्री राम (वर्तमान आचार्य प्रवर 1008 श्री रामलाल जी म.सा.)

प्रार्थना मानव-हृदय की एक सहज प्रतिक्रिया है जिसके बोल अथवा शब्द भाषा की दृष्टि से भिन्न रूपों में उभर कर सम्मुख आ सकते हैं। इस प्रकार लोगस्स का पाठ भी तीर्थंकर देवों की प्रार्थना है, भले ही वह प्राकृत भाषा में हो। स्वयं आर्य सुधर्मा स्वामी ने प्रभु महावीर की स्तुति की थी, जो सूत्रकृतांग सूत्र में पुच्छिंसु णं के नाम से संग्रहित है। युग परिवर्तन के साथ भाषा बदलती है इसीलिए पूर्व के संस्कृत भाषा के युग में संस्कृत भाषा में प्रार्थनाएँ आबद्ध हैं। भक्तामर स्तोत्रम् तीर्थंकर देवों के प्रति प्रार्थना ही है। प्रार्थना का सीधा संबंध भावना से होता है, इस कारण वह सदा बोलचाल की भाषा में होती है। साहित्यिक प्रार्थनाएँ कला के उद्देश्य को ध्यान में रखकर रची जाती हैं, इस कारण उनका स्वरूप भिन्न हो सकता है; तथापि मानव-मन उद्वेलित करने की क्षमता उनमें सदैव विद्यमान रहती है। फिर भी दैनिक जीवन में प्रयुक्त होने वाली भाषा में की गई प्रार्थना साधक के भावों को सही अभिव्यक्ति प्रदान कर सकती है। इसलिए प्रार्थना चाहे किसी भी भाषा अथवा शैली में हो, उसकी सार्थकता निर्विवाद है।

प्रार्थना क्यों की जानी चाहिए? प्रार्थना के पीछे क्या उद्देश्य होता है? हम किसलिए प्रार्थना करते हैं? ये कतिपय मन को झकझोरने वाले प्रश्न हैं। मोटे तौर पर प्रार्थना का अर्थ होता है- **याचना**। इस प्रकार यदि हम सिद्ध भगवान के स्वरूप को जानते हैं, अरिहंत देवों के स्वरूप का यदि हमें ज्ञान है और उनमें हमारी आस्था है तो हम उनसे याचना करते हैं। सिद्ध भगवान को हमने कभी देखा नहीं, उसके उपरांत भी हम उनकी प्रार्थना करते हैं। इससे यह सिद्ध होता है कि हम उनसे याचना नहीं करते क्योंकि याचना सामने होती है, जो प्रकट एवं प्रस्तुत है उससे होती है, अरिहंत देवों के प्रति प्रार्थना में ऐसा कुछ नहीं है।

प्रार्थना में शब्द ही होते हैं जो भिन्न-भिन्न रूपों में अपने अर्थ का ज्ञान कराते हैं। अभिधा में प्रयुक्त एक शब्द जो लक्षणा में नया अर्थ देता है, व्यंजनात्मक प्रयोग में सर्वथा भिन्न अर्थ दे सकता है। कबीर जैसे संतों के ऐसे अनेक पद मिलेंगे जिनमें बात सीधे रूप में नहीं कही गई है। उदाहरणार्थ कबीर की उलट बांसियाँ अथवा यह पंक्ति *'उल्टी गंगा समुदहो सोखे।'* गंगा आदि नदियों का प्रवाह समुद्र की ओर होता है। यदि कथा के मर्म को न समझा जाए तो यह पंक्ति एक पागल का प्रलाप लगती है। जब अलमस्ती का आलम होता है, अंतर् अनुभूति से आप्लावित हो जाता है तब जो शब्द वाणी ग्रहण करता है उसका अर्थ ही बदल जाता है।

कवि विनयचंद जी जब प्रार्थना करते हैं *'त्रिलोकीनाथ तू कहिये, हमारी बाहं दृढ़ गहिये'*, तब वे क्या कह रहे होते हैं? क्या सिद्ध भगवान या अरिहंत देव हमारी बाँह ग्रहण कर सकते हैं? फिर **'बाँह ग्रहण करने'** की प्रार्थना क्यों? परंतु तब इसका अर्थ समझ में आ जाता है जब हम इनका संबंध आत्मा से जोड़ते हैं। आत्मा के तार आपस में जुड़े रहते हैं। भावना यह है कि वे तार विच्छिन्न न हों। उत्तराध्ययन सूत्र में यही बात भिन्न रूप में कही गई है। सूई यदि ऐसे ही कहीं गिर जाए तो उसे ढूँढ़ पाना कठिन है, परंतु यदि उसके साथ धागा भी पिरोया हुआ हो तो वह सरलता से ढूँढ़ी जा सकती है। ऐसे ही यदि बाँह का सहारा हमारे साथ रहे तो हम

भटक भी जाएँ तो भी सही मार्ग पर लाए जा सकते हैं।

पतंग के संबंध में भी यही सच है। रहीम कवि ने ठीक ही कहा है *'उड़ी गुड़ी कितहू फिरै, तऊ उड़ायक हाथ।'* पतंग कहीं भी उड़ती रहे, परंतु जब तक उसकी डोर उड़ाने वाले के हाथ में है वह उसे खींचकर सही ठिकाने पर ला सकता है। यदि डोर ही हाथ से छूट जाए तो पतंग की क्या दशा होगी, बताना आवश्यक नहीं है। यही स्थिति जीवन की भी है। प्रार्थना करने का मूल उद्देश्य भी यही है कि मनुष्य स्वयं को विनयपूर्वक भगवान से जोड़े रहे, उसके साथ डोर से बँधा रहे।

प्रार्थना के द्वारा व्यक्ति स्वयं के अहंकार को गलित कर कृपा की आकांक्षा करता है। **'मैं'** संबोधन से बहुत बड़ी भ्राँति हो सकती है, क्योंकि जहाँ **'मैं'** आत्मा का सूचक है वहीं अहं का बोधक भी बन सकता है। यही **'अहं'** जब तक अकेला होता है, तब तक विशेष परिणाम का सूचक नहीं बनता, परंतु इसके साथ **'कार'** का योग होते ही यह **'अहंकार'** बन जाता है और **'अहं'** की शक्ति कई गुना बढ़ जाती है।

पारिवारिक कलह अथवा सामाजिक झगड़ों का मूल कारण स्त्री, धन और जायदाद माने जाते हैं। ऐसा इसलिए होता है कि व्यक्ति अपने लिए कुछ चाहता है। अपने अहं की संतुष्टि उसे सर्वप्रमुख लगती है इसलिए बँटवारे की बात आ जाती है। यदि यह अहं अथवा अहंकार भाव न हो, सभी कुछ को सब का मानें तो कलह अथवा झगड़े का आधार ही समाप्त हो जाए, परंतु व्यक्ति का अहंकार ऐसा नहीं होने देता।

बड़े-बड़े युद्धों का कारण भी शासकों अथवा अधिनायकों का अहंकार रहा है। रावण के अहंकार के कारण राम-रावण युद्ध हुआ। दुर्योधन के अहंकार-भाव के कारण महाभारत का युद्ध हुआ। सिकंदर, जूलियस सीजर, नेपोलियन, तैमूरलंग और चंगेज खाँ के विश्वविजय के स्वप्नों के पीछे उनका अहंकार भाव ही था। जर्मन जाति को सर्वश्रेष्ठ मानने के अहं तथा हिटलर के अहंकार भाव के कारण ही द्वितीय विश्वयुद्ध हुआ था। आज भी शक्तिशाली राष्ट्रनायकों का अहंकार भाव उन्हें अनोखे समझौते अथवा गुट बनाने के लिए प्रेरित कर रहा है। संपन्न राष्ट्रों का अहं उन्हें पिछड़े और विपन्न राष्ट्रों से सहयोग में बाधा उत्पन्न कर रहा है।

आज आत्महत्या एक सामान्य-सी बात बन गई है। इस आत्महत्या के पीछे कारण केवल अहं भाव पर किसी रूप में चोट पहुँचना होता है। अहं की टकराहट ऐसी स्थितियों को जन्म देती हैं जिनमें उसकी रक्षा के लिए मनुष्य कोई भी मार्ग अपनाने से नहीं हिचकता। पति-पत्नी के बीच तलाक की स्थिति भी एक के अति अहंकार भाव की दूसरे के अहंकार भाव से टकराहट के कारण ही उत्पन्न होती है। यदि दोनों पक्ष त्यागभाव का प्रदर्शन करें तथा सहनशीलता की प्रवृत्ति को न त्यागें तो झूठा प्रतिष्ठा भाव उन्हें कभी उस सीमा तक जाने न दे। भगवान महावीर ने भी क्रोध, माया, मोह जैसी दुर्वृत्तियों में अहंकार को सर्वप्रमुख माना है।

अहंकार की अवस्था में व्यक्ति का मस्तक खंभे की तरह तना रहता है। वह झुकना नहीं चाहता और जब तक ऊपर का भाग नहीं झुकता, शरीर भी झुक नहीं सकता। नमस्कार की प्रणाली में मस्तक झुकता है। यह झुकना ही संपूर्ण अहंकार का त्याग है, जिसके लिए वाणी की आवश्यकता नहीं।

बाहुबली, जिनमें अहं स्वभाव बना था, परंतु वह अहंकार का रूप नहीं ले पाया था। यदि वह अहंकार का रूप ले लेता तो नमन की प्रक्रिया में वह आगे नहीं बढ़ पाते। परंतु जैसे ही अहं का विसर्जन हुआ तो स्वयं के अहं को प्राप्त कर लिया, जिसे आचारांग सूत्र में **'सोऽहं'** की उपमा दी गई है। इसका तात्पर्य है- 'वह मैं हूँ। जिसे तू मैं कह रहा है, वह मैं नहीं हूँ, किंतु **'वह'** मैं हूँ। जहाँ अहम् का विसर्जन हो जाता है, वहाँ **'मैं'** **'वह'** हो जाता है; उसके पीछे जो अहम् है वह **'सोऽहं'** है।' इसे जानने के लिए उस अहंकार को समाप्त कर उस **'अहं'** को

प्राप्त करने के लिए प्रार्थना का सहारा लिया जाता है।

'अहं' का 'कार' के साथ संयोग ही 'अहंकार' अथवा 'ममकार' को जन्म देता है। अहंकार और ममकार व्यक्ति की आत्मा को पंगु बना देते हैं इसीलिए उनके त्याग की बात की जाती है। उनका त्याग कैसे हो, इसके लिए गुरु के सान्निध्य में विनय की बात कही जाती है। गुरु का सान्निध्य एक प्रतिरोधी क्षमता उत्पन्न कर देता है। हमें ज्ञात है कि शरीर की प्रतिरोधी क्षमता के अभाव में ही जीवाणु, विषाणु, रोगाणु जिन्हें 'वायरस' कहते हैं, मनुष्य पर हावी हो जाते हैं और उसे रुग्ण बना देते हैं। जिस प्रकार भौतिक वातावरण के जीवाणुओं से सुरक्षा के लिए भौतिक प्रतिरोधक शक्ति निर्मित करनी पड़ती है, उसी प्रकार आध्यात्मिक अथवा मानसिक वातावरण के जीवाणुओं से सुरक्षा के लिए आत्मिक प्रतिरोधक शक्ति निर्मित करनी पड़ती है। अहंकार और ममकार भाव ही ऐसे जीवाणु हैं जो मन, हृदय व चरित्र को प्रभावित करने हेतु सदैव तत्पर रहते हैं। विनय और प्रार्थना उसी आत्मिक प्रतिरोधक शक्ति के निर्माण का काम करते हैं। वे आध्यात्मिक एंटीबायोटिक्स हैं। इनकी जब हृदय में स्थिति होती है तब अहंकार अथवा ममकार के जीवाणु आक्रमण भी करें तो वह आक्रमण विफल हो जाता है। इस प्रकार जब आतंरिक प्रतिरोधक शक्ति उत्पन्न कर ली जाती है तब 'सोऽहं' का वह स्वरूप उभर कर आता है, जो मन व हृदय के सभी विकारों से सुरक्षा सुनिश्चित कर देता है। कवि विनयचंद जी परमात्मा के चरणों में वंदना करते हुए कहते हैं –

भवोदधि डूबतो तारो।
कृपानिधान आसरो थारो।।

आपका ही सहारा है। इस प्रकार प्रार्थना कर वे अपने आपको उस अवस्था में ले आते हैं, जिसमें संपूर्ण अहम् का विसर्जन हो जाता है और वह शक्ति उत्पन्न हो जाती है जो अहंकार एवं ममकार का सफल प्रतिरोध कर परमात्मा तक पहुँचने का मार्ग सुनिश्चित कर देती है।

जब हम प्रार्थना करते हैं –

'कुंथ जिनराज तूं ऐसो, नहीं कोई देव तों जैसो'

तो सम्यक् श्रुत और सम्यक् आचरण का धागा हमारे साथ जुड़ जाता है, हमारी बाँह दृढ़ हो जाती है और भावनिद्रा कभी हम पर हावी नहीं हो सकती। वह धागा हमें उसी प्रकार सावधान रखता है जिस प्रकार पतंग के साथ लगी डोर उसे ऊँचे आकाश में स्थिर रखती है, अथवा सूई के साथ लगा धागा उसे खोने नहीं देती। प्रार्थना इसी प्रकार इस भव में हमारी रक्षा करती हुई हमें परम मंगल के लोक का मार्ग प्रदर्शित करती है।

साभार- मंथन का नवनीत

आत्मा और परमात्मा के बीच जो दूरी है उसका हेतु/कारण कर्म विपाक है और कर्म विपाक से जो कर्म बंधन के हेतु बनते हैं उन्हें बंध का और दूरी का कारण बताया गया है। कर्म बंध क्रिया से होता है। कहा भी गया है- 'या या क्रिया सा सा फलवती।' यह क्रिया मन से, वचन से और काया से होती है। चलना, फिरना, बोलना, बैठना, ये सब क्रियाएँ हैं। जो भी क्रिया होंगी उसमें शुभाशुभ आश्रव का संयोग होगा। शुभाशुभ आश्रव से जो आदान होगा वह आत्मा से संयुक्त होगा और कार्मण-वर्गणा रूप पुद्गलों का आत्मा से संयुक्त होना ही कर्म की संज्ञा प्राप्त करता है। अबाधाकाल बीतने पर ये कर्म उदय में आते हैं। विपाक (फल), फिर क्रियाएँ और बंध, यह क्रम अनवरत चला आ रहा है। एक समय भी ऐसा नहीं होता जिसमें मन, वचन या काया की क्रिया नहीं हो रही हो। व्यक्ति विचार करता है, क्रिया रुकती नहीं, कर्म बंध चलता रहता है तो फिर मुक्ति का उपाय ही नहीं है।

– परम पूज्य आचार्य प्रवर 1008 श्री रामलाल जी म.सा.

आध्यात्मिक आरोग्यम्

अमूल्य पाथेय आध्यात्मिक आरोग्यम्

परम पूज्य आचार्य प्रवर 1008 श्री रामलाल जी म.सा. का जन-जन के चिंतन हेतु अमूल्य आयाम **'आध्यात्मिक आरोग्यम्'** ब्यावर की पुण्य धरा पर ज्ञान पंचमी को प्रदान किया गया था, जिसका धारावाहिक आप सभी के समक्ष आत्मकल्याण हेतु प्रस्तुत हैं।

आरोग्य है अध्यात्म का,
गुरु राम सागर से मिला।
अनमोल निधि आरोग्य की पाकर,
सुमन मन का खिला।
डुबकी लगा गोते लगा,
मन का कलिमल दूर कर।
आनंद भक्ति प्रेम से,
गुरुदेव का जयनाद कर।।

जीवन सुख का सागर है। आनंद से भरा हुआ है। चारों तरफ सुख की हवाएँ चल रही हैं। यह नंदन वन है, चिंतामणि रत्न है, कामधेनु है, कल्पवृक्ष है, कामकुंभ है, अलादीन का चिराग है, जिससे आप जो चाहें पा सकते हैं, जो चाहें बन सकते हैं, जैसा चाहें वैसा कर सकते हैं। इसमें निखार लाना आपके हाथ में है।

यही बात श्री उत्तराध्ययन सूत्र में कही गई है। श्री उत्तराध्ययन सूत्र के 20वें अध्ययन में कहा गया है -

अप्पा कामदुहा धेणू, अप्पा मे नंदणं वणं।

आत्मा सर्व शक्तिमान है। ऊँचे से ऊँचे देवलोक में जाने का काम इस जीवन में हो सकता है। इस जीवन में मोक्ष भी संभव है। कहा भी गया है कि मनुष्य तू बड़ा महान है। तू जो चाहे तो नदियों की धारा को मोड़ दे।

सुख के सागर में हम हैं। सुख के पर्वत पर हम हैं। सुख के वातावरण में हम हैं। हर पल, हर क्षण चारों तरफ सुख बरस रहा है। ज्ञानीजनों ने इस जीवन को सुख का खजाना बताया है। सुख के उस खजाने में से मनुष्य कितना ले पाता है, यह उस पर निर्भर है।

मनुष्य सोचता है कि ज्ञानीजन कह तो रहे हैं कि सुख है, पर नजर तो नहीं आ रहा। दिख तो कुछ और रहा है। वह सोचता है कि ज्ञानीजनों ने तो इस जीवन को सुख का सागर बताया है, फिर चारों तरफ दु:ख क्यों दिख रहा है! वह सोचता है कि उन्होंने सुख का खजाना बताया है पर हमें दु:ख भरा हुआ क्यों नजर आ रहा है!

वह सोचता है कि या तो ज्ञानी गलत हैं या हम गलत हैं। फिर तुरंत सोचता है कि ज्ञानी तो गलत हो नहीं सकते। गलती हमारी ही है।

इसी दुनिया में बुद्ध थे। इसी दुनिया में महावीर थे। इसी दुनिया में राम थे। अर्जुन अणगार, गोशालक, जमाली और देवदत्त भी इसी दुनिया में थे। दुनिया एक ही थी, पर देवदत्त दु:खी हो गया। बुद्ध और देवदत्त की दुनिया में कोई फर्क नहीं था, पर एक महान सुखी और

एक बहुत दु:खी बना। हमें देखना है कि हम क्या कर रहे हैं! इस संसार में हम सुखी हो रहे हैं या दु:खी! संसार तो एक ही है। सुखी और दु:खी होना हमारे ऊपर है।

रबड़ी, बल भी दे सकती है और अपच, अजीर्ण भी करा सकती है। संखिया नामक जहर मार भी सकता है और दवा के रूप में भी काम आ सकता है। महाभारत में ऐसा कहा गया है कि भीम जहर को भी हजम कर जाता था।

हम क्या कर रहे हैं यह हमें सोचना है। यह बात निश्चित है कि सुख हम पर निर्भर है। यह निश्चित है कि सुख हमारे ही अंदर है। हमें देखना है कि हम अपने अंदर उस सुख को पहुँचा पा रहे हैं या नहीं! इसी को समझने के लिए हमें अपने को टटोलना है, अपनी जाँच करनी है। जाँच करने की कसौटी है **आध्यात्मिक आरोग्यम्**। आध्यात्मिक आरोग्यम् वह कसौटी है जिस पर हम खुद को कस सकते हैं। जिससे हम खुद की जाँच कर सकते हैं। जिससे हम खुद को टटोल सकते हैं। जिससे हम खुद का अवलोकन और आंकलन कर सकते हैं।

आध्यात्मिक मतलब आत्मा और आरोग्यम् मतलब निरोगता, यानी आत्मा की निरोगता, आत्मा की स्वस्थता। अपने आपको इस कसौटी पर कसना है कि हमारी आत्मा कितनी निरोगी है। हम कितने स्वस्थ हैं। अब आप सोच सकते हैं कि आत्मा तो निरुज है फिर यह कैसा सवाल है कि आत्मा कितनी रोगी है? यही तो समझना है कि आत्मा निरोगी है फिर यह रोग क्यों पैदा हो रहे हैं!

मनोवैज्ञानिक कहते हैं कि 95% बीमारियाँ मन की उपज हैं। 95% बीमारियों का संबंध मन की गंदगी से है। व्यक्ति 95% मन के रोगों से ग्रस्त है। हमें आध्यात्मिक आरोग्यम् के द्वारा देखना है कि हम मन से स्वस्थ हैं या नहीं!

आपके सामने कई बार ऐसी बात आई होगी कि किसी पेसेंट की सारी रिपोर्ट्स नॉर्मल हैं, लेकिन पेसेंट एबनॉर्मल है। यूरिन, ब्लड, स्टूल, एम.आर.आई., सिटी स्कैन, ई.सी.जी., लिपिड प्रोफाइल, सब ठीक है, लेकिन मरीज ठीक नहीं दिखता। अच्छी से अच्छी दवाइयाँ असरहीन हो जाती हैं। कोई दवा असर नहीं करती। किसी दवा से फायदा नहीं होता। इस प्रकार की स्थिति होना आध्यात्मिक रुग्णता है।

आचार्य श्री रामलाल जी म.सा. फरमा रहे हैं आध्यात्मिक आरोग्यम् के बारे में। इस सदी के महानतम विचारों में से एक है यह। जिनशासन समुद्र का जगमगाता रत्न है आध्यात्मिक आरोग्यम्। रत्नों से भरा खजाना है आध्यात्मिक आरोग्यम्।

जैसे कार में पेट्रोल न होने पर गति की कल्पना नहीं की जा सकती, वीजा न होने पर विदेश जाने के बारे में नहीं सोचा जा सकता, आधार कार्ड न होने पर देश में सुरक्षित नहीं रह सकते, अ, आ, ई का ज्ञान न होने पर ग्रंथ नहीं पढ़ सकते, बिना इलेक्ट्रिसिटी के ए.सी.-कूलर आदि इलेक्ट्रॉनिक्स सामान का प्रयोग नहीं कर सकते, वैसे ही आध्यात्मिक आरोग्यम् के बिना सुखी जीवन की कल्पना नहीं कर सकते। जैसे सिम के बिना मोबाइल व्यर्थ है, सील (SEAL) के बिना नोट बेकार है, लाइट हाऊस के बिना बड़ी से बड़ी शिप किसी काम की नहीं है, रडार के बिना बड़े से बड़ा वायुयान व्यर्थ है, वैसे ही आध्यात्मिक आरोग्यम् के बिना स्वस्थ जीवन की कल्पना करना व्यर्थ है।

होंठों पे लाली, कानों में बाली, माथे पे बिंदिया, गले में हार, पैरों में पायल से लेकर बालों के गजरे तक सजी राजीमती का सारा शृंगार अरिष्टनेमि भगवान के लौट जाने पर व्यर्थ हो जाता है, वैसे ही आध्यात्मिक आरोग्यम् के बिना किए गए सारे अनुष्ठान व्यर्थ हो जाते हैं।

जैसे राजुल, नेमि के बिना चक्कर खाकर गिर जाती है, वैसे ही आध्यात्मिक आरोग्यम् बिना साधना चक्कर खाकर गिर जाती है।

जैसे राजुल, नेमि के बिना टप-टप आँसू बहाती है, वैसे ही साधना, आध्यात्मिक आरोग्यम् के बिना

आँसू बहाती है।

जैसे राजुल मुरझा जाती है, वैसे ही साधना मुरझा जाती है।

जैसे राजुल को नेमि के बिना सब कुछ सूना-सूना लगता है, वैसे ही साधना, आध्यात्मिक आरोग्यम् के बिना सूनी हो जाती है।

जैसे राजुल, नेमि के बिना चलती-फिरती लाश हो जाती है, वैसे ही साधना, आध्यात्मिक आरोग्यम् के अभाव में चलती-फिरती लाश हो जाती है।

राजुल का प्राण आधार अरिष्टनेमि कुमार है और साधना का प्राण आधार आध्यात्मिक आरोग्यम् है।

राजुल का सहारा नेमि है और साधना का सहारा आध्यात्मिक आरोग्यम् है।

राजुल का प्राण नेमि है और साधना का प्राण आध्यात्मिक आरोग्यम् है।

राजुल की साँस नेमि है और साधना की साँस आध्यात्मिक आरोग्यम् है।

जैसे बिना पानी फसल, बिना चमक हीरा, रेडियो तरंग बिना नेटवर्क हम नहीं सोच सकते हैं, वैसे ही बिना आध्यात्मिक आरोग्यम् के जीवन और सुख की कल्पना नहीं की जा सकती।

पिछली सदी में हमने सुख के कारण बहुत खोज लिए। गर्मी से बचने के लिए ए.सी., सर्दी से बचने के लिए हीटर, पैर न थके, इसके लिए गाड़ी और मनोरंजन के लिए टी.वी. हमारे पास है। इन सबको खरीदने के लिए धन है, पर सुख इंडेक्स में हम पिछड़ते चले जा रहे हैं। आज से 100 साल पहले आदमी के पास ये सब नहीं था, पर वह अब से ज्यादा सुखी था। मोबाइल नहीं था, पर बातें मीठी थीं। 5000 सी.सी. का इंजन नहीं था, पर दुनिया सुकून भरी थी। फेसबुक पर हजारों-लाखों फॉलोवर नहीं थे, पर व्यक्ति आनंदित था। इनसान पूरे विश्व की खबरों से बेखबर था, पर अपनी दुनिया में मस्त था। साधनों से अधूरापन होने के बावजूद वह पूर्ण था। साधनों का अभाव था, पर भाव शुभ था। सद्भाव था। आध्यात्मिक आरोग्यम् था।

कोई चीज बनती थी तो पूरा मोहल्ला खाता था। हर चीज को बाँटा जाता था। सुख-दु:ख में सभी एक-दूसरे के साथी थे। तब के लोगों को लोग निपट मूर्ख भले कह लें, किंतु उस समय के लोग आज के डिग्रीधारियों से कहीं ज्यादा समझदार थे। साधन कम थे, पर संपन्नता ज्यादा थी, ज्यादा सभ्य थे। आज जब मनुष्य ऐसी प्रतियोगिता में भाग रहा है जिसमें यह पता ही नहीं कि जाना कहाँ है, तब आध्यात्मिक आरोग्यम् परम उपयोगी है।

आध्यात्मिक आरोग्यम् जीवन को समझने का चश्मा देता है। उसकी नई व्याख्या करता है। नए तौर से परिभाषित करता है। भूले-बिसरे बिंदुओं को जोड़ता है।

जीवन को न समझने की वजह से ही लोग आत्महत्या करते हैं। नेशनल क्राइम रिकार्ड ब्यूरो की अगस्त 2022 की रिपोर्ट के अनुसार भारत में सन् 2021 में 1,64,033 लोगों ने आत्महत्या की, यानी 450 लोग प्रतिदिन। रिपोर्ट के अनुसार शहरों में आत्महत्या की दर गाँवों के मुकाबले अधिक है। ध्यान देने की बात है कि शहर में रहने वालों के पास गाँव के लोगों से अधिक संसाधन हैं। यदि संसाधनों से ही सुख मिलता तो गाँव वाले अधिक आत्महत्या करते न कि शहर के निवासी।

इतनी आत्महत्याएँ देखकर कोई कह सकता है कि जीवन सुख का सागर है? कोई कह सकता है कि आनंद से भरा हुआ है? कोई इसे सुख का खजाना मान सकता है? कोई मान सकता है कि संसाधनों में सुख है?

नहीं! कदापि नहीं।

आत्महत्या करने का मन हो तो आध्यात्मिक आरोग्यम् के बारे में जान लेना।

उससे थोड़ी समझ ले लेना।

उसके पास बैठकर कुछ सीख लेना।

उसके कुछ घूँट पी लेना।

उसका रसपान कर लेना।

वह मुर्दे में जान फूँकने का जज्बा रखता है। इन बिंदुओं पर आगे चर्चा होगी, किंतु चर्चा से पहले अपने आप को देखें कि मैं सुखी हूँ या नहीं! यदि दु:खी हैं तो सीधा मतलब है कि आध्यात्मिक रूप से रुग्ण हैं। भीतर से बीमार हैं। जो भीतर से बीमार हो, उसे कोई भी टॉनिक ताकत नहीं दे सकता। ताकत प्राप्त करने के लिए पहले बीमारी को दूर करना होगा। बीमारी दूर होगी फिर टॉनिक आपको ताकत दे पाएगा।

यदि हम आध्यात्मिक रूप से बीमार हैं तो हमारे द्वारा दिया गया दान, हमारे द्वारा की गई सामायिक, हमारे द्वारा किया गया पौषध, हमारे द्वारा की गई दया, हमारे द्वारा किया गया संवर, हमारे द्वारा की गई तपस्या, हमारे द्वारा ली गई दीक्षा, संयम सब व्यर्थ है। आध्यात्मिक आरोग्यम् के अभाव में ये सब कोई फल नहीं दे पाएँगे। कोई बहुत बड़ा लाभ नहीं मिल पाएगा। आध्यात्मिक आरोग्यम् हमारी बीमारी को दूर करेगा। जब बीमारी दूर होगी तो हम धीरे-धीरे स्वस्थ और बलिष्ठ बन पाएँगे।

पीलिया, टाइफॉइड और मलेरिया का कोई रोगी जिम में जाकर वर्जिश करे तो आप उसे सलाह देंगे कि भाई, पहले बीमारी तो ठीक कर ले, फिर बाद में जिम ज्वाइन करना।

यदि वह बीमार अवस्था में ही वर्जिश करता रहेगा तो और बीमार होता जाएगा। और तो और उसकी मेहनत, उसकी मौत का सबब भी बन सकती है।

बहुत बड़ा मकान हो। उसमें फर्नीचर, टी.वी., फ्रिज, मोबाइल, कपड़े, सब्जियाँ, फल-फूल, गाड़ी, रुपया-पैसा जैसे दैनिक उपयोगी साधनों के साथ दुनिया की सारी सुविधाएँ हों, परंतु ऑक्सीजन न हो तो क्या जीवन की कल्पना की जा सकती है?

नहीं की जा सकती।

हमने 2020 में देखा कि कैसे कोरोना का मरीज ऑक्सीजन की कमी के कारण सब कुछ सही सलामत होते हुए भी मौत के मुँह में चला गया। सैकड़ों-हजारों नहीं, लाखों भले-चंगे लोग मौत के मुँह में चले गए। क्या बच्चे, क्या जवान, क्या बूढ़े। कई लोग तो 2-3 मिनट के भीतर ही काल के गाल में समा गए। बचाने के लिए कोई उपाय करना तो दूर की बात रही, सोचने-समझने तक का मौका नहीं मिल पाया। कुछ लोग न भी मरे तो उनके शरीर पर उसका दुष्प्रभाव देखने को मिला। किसी का हृदय, किसी का फेफड़ा तो किसी की किडनी और किसी का लीवर डैमेज हो गया। इसका कारण सिर्फ ऑक्सीजन की कमी ही थी।

जैसे शरीर में ऑक्सीजन का महत्त्व है, वैसे ही जीवन के क्षेत्र में आध्यात्मिक आरोग्यम् का महत्त्व है। आध्यात्मिक आरोग्यम् वह प्राणवायु है जो जीवन के हर क्षेत्र को सुखी, समृद्ध और स्वस्थ बनाने में परम सहायक है।

आध्यात्मिक आरोग्यम् के बिंदुओं को आत्मसात करने पर जीवन की बड़ी से बड़ी समस्या मिट सकती है। कोई व्यक्ति एक भी शास्त्र न पढ़े, सिर्फ आध्यात्मिक आरोग्यम् को पढ़े तो वह जीवन के किसी भी क्षेत्र में कभी असफल नहीं होगा।

जैसे पुष्पों का सार इत्र होता है, भोजन का सार बल होता है, वैसे ही आगम का सार आध्यात्मिक आरोग्यम् है।

जैसे पर्वतों में हिमालय, रत्नों में कोहिनूर और नदियों में गंगा श्रेष्ठ है, वैसे ही जीवन परिवर्तन के सूत्रों में आध्यात्मिक आरोग्यम् सर्वश्रेष्ठ है। एक छोटी-सी घटना पर गौर करेंगे तो आध्यात्मिक आरोग्यम् की श्रेष्ठता स्पष्ट हो जाएगी। घटना एक सेठ के जीवन की है।

एक बड़ा सेठ था। उसका मन अपने शहर को छोड़कर तीर्थ यात्रा करने का हुआ, किंतु तीर्थ यात्रा करने से पहले वह चिंतित हो जाता है। चिंता के कारण उसका शरीर दुबला होता जाता है। सभी पूछते हैं कि सेठ क्या हुआ, परंतु वह कुछ नहीं कह पाता। एक दिन उसका

परम बुद्धिमान मित्र उससे मिलने आया। सेठ की हालत देखकर उसका मित्र पूछता है कि सेठ तुम्हें क्या हुआ? तुम क्यों इतने दुबले हो रहे हो, तुम्हें कौन-सी चिंता सता रही है?

पहले तो सेठ टालमटोल करता है, परंतु अति विशिष्ट मित्र के अत्यधिक आग्रह पर कहता है कि मेरा मन तीर्थ यात्रा करने का है, परंतु संपत्ति की अधिकता के कारण मैं जा नहीं पा रहा हूँ।

सेठ का मित्र सेठ की बात सुनकर जोर से हँसने लगा। हँसते हुए कहता है कि बस इतनी-सी बात! वह आगे कहता है कि तुम अपनी संपत्ति बेच दो और उसके बदले बेशकीमती रत्न खरीद लो। उन रत्नों को लेकर तुम जहाँ चाहो वहाँ जा सकते हो। उनका भार भी महसूस नहीं होगा।

अपने मित्र के कहे अनुसार सेठ अपनी संपत्ति को बहुमूल्य रत्नों में बदल लेता है। अब कोई पूछे कि उस सेठ के पास कितना पैसा है, पहले जितना था उतना ही है या कम, तब आप क्या कहेंगे? आप यही कहेंगे ना कि उतना का उतना ही धन है। ठीक वैसे ही शास्त्रों की महान संपत्ति का अगर संक्षिप्तीकरण किया जाएगा तो संक्षिप्त नाम होगा आध्यात्मिक आरोग्यम्।

किसी प्रदेश में एक पक्षी होता है। वह पक्षी अपने चूजे के लिए भोजन ढूँढ़ता है। चूजे को भोजन देने से पहले वह पक्षी अपने मुँह में डालकर उस आहार को उनके खाने योग्य बनाता है और जितना आहार उस चूजे के लिए आवश्यक है उतना ही उसे खाने को देता है। चूजा नासमझ व अनगढ़ है। चूजा आहार की तलाश करना नहीं जानता। वह आहार निगलने की विधि भी नहीं जानता। माँ के कहे अनुसार माँ द्वारा दिए भोजन कणों का उपभोग करता है। वह क्षण-क्षण विकसित होता चला जाता है। ठीक उसी प्रकार आचार्य भगवन् अपने शिष्यों को शास्त्रों का भोजन कराने के लिए शास्त्र रूपी जंगल से चुनकर अपनी मेधा रूपी चोंच में रखकर परिपक्व बनाते हैं। उसी परिपक्व भोजन का नाम है आध्यात्मिक आरोग्यम्। आध्यात्मिक आरोग्यम् सभी आवश्यक तत्त्वों से भरपूर है। जो शिष्य उन कणों का उपभोग करेगा वह आध्यात्मिक विकास को प्राप्त करेगा। शिष्य श्रावक भी हो सकता है और साधु भी।

अगली कड़ी में हम आध्यात्मिक आरोग्यम् को समझने की कोशिश करेंगे। यह जानने की कोशिश करेंगे कि वे रत्न कौनसे हैं और उनका उपयोग जीवन को समृद्ध बनाने के लिए कैसे किया जा सकता है। जानेंगे कि खोए हुए आत्मिक स्वास्थ्य को पुन: कैसे प्राप्त किया जा सकता है। जिस सुख के सागर की हमने प्रारंभ में बात की थी उस सुख के सागर का अनुभव किया जा सकता है।

मन की शक्ति हारा हुआ मनुष्य आध्यात्मिक आरोग्यम् द्वारा पुन: उस शक्ति को प्राप्त कर सकता है। कामधेनु, कल्पवृक्ष के समान आत्मा का लाभ लिया जा सकता है। शक्ति प्राप्त करने के लिए कामधेनु और कल्पवृक्ष के समान आत्मा का लाभ लेने के लिए उन 9 बिंदुओं को अपने जीवन में उतारना होगा, जिनकी चर्चा आगे की जाएगी।

-क्रमश:

साभार- आध्यात्मिक आरोग्यम्

अहंभाव और ममत्व जैसी ग्रंथियों से युक्त मनुष्य के जीवन में मानसिक और शारीरिक व्याधि का प्रादुर्भाव होना सहज है। इन व्याधियों को शमित कराने में कोई भी ग्रंथिवान व्यक्ति सक्षम नहीं बन सकेगा, क्योंकि जो स्वयं ग्रंथियुक्त है वह दूसरों को ग्रंथिरहित कैसे बना पाएगा? परिणामस्वरूप व्यक्ति परिवार, समाज, राष्ट्र और विश्व ग्रंथियों से ग्रस्त बना अशांति के झूले में झूलता रहेगा।

-परम पूज्य आचार्य प्रवर 1008 श्री नानालाल जी म.सा.

श्रीमत् प्रज्ञापनासूत्र प्रश्नमाला

15-16 सितंबर 2024 अंक से आगे...

संकलनकर्ता - कंचन कांकरिया, कोलकाता

प्रश्न 103 परिसर्प स्थलचर कितने प्रकार के हैं?

उत्तर परिसर्प स्थलचर दो प्रकार के होते हैं। यथा -

1) उरपरिसर्प - अपनी छाती से (परिसर्पण) रेंग कर चलते हैं और

2) भुजपरिसर्प - अपनी भुजाओं के सहारे चलते हैं। जैसे - गोह (स्प्रंतक)। प्राचीन काल में गोहों का उपयोग लड़ाई के समय किले की ऊँची दीवारों पर चढ़ने के लिए किया जाता था। इनके पैरों की पकड़ बहुत मजबूत होती है। जिस पर चिपक जाती है, उससे छुड़ाना आसान नहीं होता है।

प्रश्न 104 उरपरिसर्प कितने प्रकार के हैं?

उत्तर उरपरिसर्प चार प्रकार के हैं। यथा - (1) अहि (सर्प), (2) अजगर, (3) आसालिक और (4) महोरग।

प्रश्न 105 अहि कितने प्रकार के हैं?

उत्तर अहि दो प्रकार के होते हैं। यथा - दर्वीकर (फन वाले सर्प) और मुकुली (बिना फन वाले सर्प)।

प्रश्न 106 दर्वीकर सर्प कितने प्रकार के हैं?

उत्तर दर्वीकर सर्प अनेक प्रकार के हैं। यथा - आशीविष (दाढ़ में विष), दृष्टिविष, उग्रविष, भोगविष (फन या शरीर में विष), त्वचाविष, लारविष, उच्छ्वासविष, निःश्वासविष, कृष्णसर्प, श्वेतसर्प आदि। (दर्वीकर सर्प अधिक विषैले, शीघ्र कुपित होने वाले तथा डरावने होते हैं)

ध्यातव्य बिंदु - कटु वचन भी विष के समान होते हैं।

प्रश्न 107 भगवान महावीर पर दृष्टि ज्वाला एवं चरणों में दंश मारने वाला चंडकौशिक सर्प, सर्पयोनि में क्यों उत्पन्न हुआ?

उत्तर पूर्वभव में उग्रक्रोधी स्वभाव वाला होने के कारण चंडकौशिक दृष्टिविष सर्प बना। (दृष्टिविष सर्प की नजर पड़ने मात्र से जहर चढ़ जाता है)

प्रश्न 108 मुकुली सर्प कितने प्रकार के हैं?

उत्तर मुकुली सर्प अनेक प्रकार के हैं। यथा - दिव्याक, कषाधिक, चित्रली, मंडली, माली आदि। (ये अधिकतर विषहीन या अल्प विष वाले होते हैं)

प्रश्न 109 अजगर (पाइथन) कितने प्रकार के हैं?

उत्तर अजगर एक ही आकार-प्रकार के हैं, ये लगभग 20-40 फीट लंबे एवं एक फीट तक मोटे होते हैं, किंतु विषैले नहीं होते हैं। ये अपने शिकार को समूचा ही निगल जाते हैं।

प्रश्न 110 भंते! आसालिक किस प्रकार के होते हैं? वे कहाँ सम्मूर्च्छिम (उत्पन्न) होते हैं?

उत्तर गौतम! आसालिक निर्व्याघात रूप से मनुष्य क्षेत्र में, द्वीपों में, 15 कर्मभूमियों में और व्याघात की अपेक्षा 5 महाविदेह क्षेत्रों में उत्पन्न होते हैं। चक्रवर्ती, वासुदेवों, बलदेवों, मांडलिक (अल्प वैभव वाले) राजाओं के स्कंधावारों (सैनिक शिविरों), ग्राम, नगर, राजधानी आदि का विनाश होने वाला हो (यानी उनका पुण्य समाप्त होने वाला हो) तब इन पूर्वोक्त स्थानों के नीचे की भूमि को फाड़कर सम्मूर्च्छिम रूप से उत्पन्न होते हैं।

प्रश्न 111 आसालिक की अवगाहना और स्थिति कितनी होती है?

उत्तर इनकी अवगाहना जघन्य अंगुल के असंख्येयतम भाग, उत्कृष्ट 12 योजन की होती है। अवगाहना के अनुरूप इनके शरीर की चौड़ाई और मोटाई होती है। ये असंज्ञी, मिथ्यादृष्टि और अज्ञानी होते हैं तथा अंतर्मुहूर्त की आयु भोगकर काल कर जाते हैं।

प्रश्न 112 क्या लवण समुद्र और कालोदधि समुद्र में आसालिक होते हैं?

उत्तर नहीं, शास्त्र में यह प्रकट करने के लिए ही मनुष्य क्षेत्र के साथ द्वीप और 15 कर्मभूमियों का उल्लेख किया है।

प्रश्न 113 5 भरत, 5 ऐरवत में आसालिक का व्याघात कब होता है?

उत्तर इन क्षेत्रों में जब युगलिक काल होता है तब आसालिक नहीं होते हैं, शेष आरों में होते हैं।

प्रश्न 114 महोरग कितने प्रकार के हैं?

उत्तर महोरग अनेक प्रकार के हैं – कई महोरग एक अंगुल के, कई पृथक्त्व अंगुल के, कई एक बिलांत (12 अंगुल) के, कई पृथक्त्व बिलांत के, कई एक रत्नि (हाथ) के यावत् कई हजार योजन के होते हैं। ये स्थल में उत्पन्न होते हैं, किंतु जल और स्थल दोनों स्थानों में विचरण करते हैं। ये द्वीप में नहीं होते हैं, किंतु बाहर के द्वीप-समुद्रों में होते हैं। (महोरग सर्प का ही एक विशिष्ट प्रकार है)

नोट – शास्त्रकार ने कितनी विचित्र शैली में महोरग की प्ररूपणा की है।

प्रश्न 115 उपर्युक्त चारों प्रकार के उरपरिसर्प कितने प्रकार के कहे गए हैं?

उत्तर संक्षेप में दो प्रकार के कहे गए हैं – 1) सम्मूर्च्छिम – नपुंसक वेद वाले होते हैं और

2) गर्भज – तीनों वेद वाले होते हैं। ये दोनों प्रकार के जीव पर्याप्तक और अपर्याप्तक होते हैं तथा इनकी 10 लाख जाति-कुलकोटि-योनि प्रमुख हैं।

प्रश्न 116 भुजपरिसर्प कितने प्रकार के हैं?

उत्तर भुजपरिसर्प अनेक प्रकार के हैं। यथा – नकुल (नेवले), गिरगिट, छिपकली, चूहे, गिलहरी आदि। ये सम्मूर्च्छिम और गर्भज होते हैं। सम्मूर्च्छिम नपुंसक होते हैं तथा गर्भज तीनों वेद वाले होते हैं। ये पर्याप्तक और अपर्याप्तक दो प्रकार के होते हैं। इनकी 9 लाख जाति-कुलकोटि-योनि प्रमुख हैं।

साभार- श्रीमत् प्रज्ञापनासूत्र प्रश्नमाला

-क्रमशः

श्रीमद् उत्तराध्ययनसूत्र

द्वादश अध्ययन : हरिएसिज्जं

15-16 सितंबर 2024 अंक से आगे...

संकलनकर्ता - सरिता बैंगानी, कोलकाता

पूर्व चित्रण – *हरिकेशबल मुनि के पूर्व भवों की झाँकी दी गई है। बालक हरिकेशबल को जातिस्मरण ज्ञान से अपने पूर्व भव में कृत जातिमद के दुष्परिणाम तथा भोगों की तुच्छता व असारता की समझ हुई, जिससे वे संसार से विरक्त हो गए। चांडाल कुल में उत्पन्न हुए, किंतु वे अपने तप, संयम एवं चारित्र की निर्मल आराधना से वे महान बन गए।*

मुनि हरिकेशबल संयम जीवन का विशुद्ध रूप से पालन करते हुए कर्मक्षय करने के लिए तीव्र तपश्चर्या में लीन रहने लगे। एक बार विहार करते हुए वे वाराणसी पहुँचे। वहाँ तिंदुकवन में एक विशिष्ट तिंदुकवृक्ष के नीचे वे ठहर गए और वहीं मासखमण-तपश्चर्या करने लगे। उनके उत्कृष्ट तप एवं गुणों से प्रभावित होकर उस वृक्ष में रहने वाला तिंदुक नाम का एक यक्ष उनकी वैयावृत्य करने लगा। एक बार नगरी के राजा कौशालिक की भद्रा नाम की राजपुत्री पूजन सामग्री लेकर अपनी सखियों सहित उस तिंदुक यक्ष की पूजा करने आई। उसने यक्ष की प्रदक्षिणा करते हुए मलिन वस्त्र और गंदे शरीर वाले कुरूप मुनि को देखा तो उसने घृणाभाव से उन पर थूक दिया। यक्ष ने राजपुत्री को यह असभ्य व्यवहार करते देखा तो कुपित होकर शीघ्र ही उसके शरीर में प्रविष्ट हो गया। यक्षाविष्ट राजपुत्री पागलों की तरह असंबद्ध प्रलाप एवं विकृत चेष्टाएँ करने लगी। राजा उसकी स्थिति देखकर अत्यंत चिंतित हो गए। अनेक उपचार होने लगे, किंतु सभी निष्फल हुए। राजा और मंत्री विचारमूढ़ हो गए कि अब क्या किया जाए? इतने में ही यक्ष किसी और के शरीर में प्रविष्ट होकर बोला कि ''इस कन्या ने घोर तपस्वी महामुनि का घोर अपमान किया है, अतः मैंने उसका फल चखाने के लिए इसे पागल कर दिया है। अगर आप इसे जीवित देखना चाहते हैं तो इस अपराध के प्रायश्चित्त स्वरूप उन्हीं मुनि के साथ इसका विवाह कर दीजिए। अगर राजा ने यह विवाह स्वीकार नहीं किया तो मैं राजपुत्री को जीवित नहीं रहने दूँगा।''

राजा ने विवाह की बात स्वीकार कर ली और मुनि की सेवा में पहुँचकर अपराध की क्षमा माँगी। हाथ जोड़कर भद्रा को सामने उपस्थित करते हुए प्रार्थना कि ''भगवन्! इस कन्या ने आपका महान अपराध किया है। अतः मैं आपकी सेवा में इसे परिचारिका के रूप में देता हूँ। आप इसका पाणिग्रहण कीजिए।'' यह सुनकर मुनि ने शांतभाव से कहा— ''राजन्! मेरा कोई अपमान नहीं हुआ है। ये धन-धान्य, स्त्री-पुत्र आदि समस्त सांसारिक संबंध मोक्ष-मार्ग में बाधक हैं। मैं ब्रह्मचर्य महाव्रती हूँ। किसी भी स्त्री के साथ विवाह करना तो दूर रहा, स्त्री के साथ एक मकान में निवास करना भी हमारे लिए अकल्पनीय है। संयमी पुरुषों के लिए संसार की समस्त स्त्रियाँ माता, बहन व पुत्री के समान हैं। आपकी पुत्री से मुझे कोई प्रयोजन नहीं है।'' इतना कहकर मुनि पुनः ध्यानलीन हो गए।

मुनि ने जब उसे स्वीकार नहीं किया तो राजा के पास बैठे हुए रुद्रदेव पुरोहित ने कहा कि ''ब्राह्मण भी ऋषि का

ही रूप है। अतः आप इस कन्या का विवाह किसी ब्राह्मण से करवा दीजिए।'' राजा ने पुरोहित की बात सुनकर उसी रुद्रदेव ब्राह्मण के साथ उसका विवाह करा दिया। कुछ काल बीता, पुरोहित ने यज्ञ किया। दूर-दूर से विद्यावान ब्राह्मण बुलाए गए। उन सबके आतिथ्य के लिए प्रचुर भोजन बनाया गया। उस समय मुनि हरिकेशबल एक-एक मास का तप कर रहे थे। मुनि पारणे हेतु भिक्षा के लिए पर्यटन करते हुए उसी यज्ञशाला में पहुँच गए। उसके बाद मुनि और वहाँ के ब्राह्मणों के बीच जो वार्तालाप का प्रसंग चला, उसका संकलन सूत्रकार ने किया है। सर्वप्रथम ब्राह्मण कुमार मुनि के जीर्ण व मलिन वस्त्र आदि की अवहेलना करते हैं, परंतु अंत में उनके तप व ज्ञान से प्रभावित होकर आत्मकल्याण का मार्ग ग्रहण कर लेते हैं। उपरोक्त कथा श्रीमद् उत्तराध्ययन सूत्र के कथा साहित्य से ली गई है। आगे की कथा सूत्र रूप में इस प्रकार उपलब्ध है।

हरिकेशबल मुनि का परिचय एवं भिक्षार्थ गमन

सोवाग-कुल-संभूओ, गुणुत्तरधरो मुणी।
हरिएस-बलो नाम, आसि भिक्खू जिइंदिओ।।1।।

भावार्थ - चांडाल कुल में उत्पन्न होकर ज्ञान आदि सर्वोत्तम गुणों को धारण करने वाले मुनि, हरिकेशबल भिक्षु जितेंद्रिय थे।

सोवाग-कुल-संभूओ - श्वपाक कुल अर्थात् चांडाल, मातंग, श्मशानवृत्ति और नीच, ये सब एकार्थक हैं। इस कुल में कुत्ते का मांस भक्षण करते हैं, शव के वस्त्रों का उपयोग करते हैं, असंस्कारी होते हैं, आकृति से भयंकर एवं प्रकृति से कठोर होते हैं।

मुणी - मुनि के दो अर्थ हैं - 1. सर्वविरति की प्रतिज्ञा लेने वाले, 2. धर्म का मनन करने वाले।

हरिएस-बलो - हरिकेश उनका गोत्र और बल उनका नाम था। उस युग में नाम से पूर्व गोत्र का प्रयोग होता था। इसलिए वे 'हरिकेशबल' के नाम से प्रसिद्ध थे।

इस गाथा का आशय यह है - किसी जाति या कुल में जन्म लेने मात्र से व्यक्ति उच्च या नीच नहीं होता है, किंतु गुणों और अवगुणों के कारण व्यक्ति की उच्चता-नीचता प्रकट होती है। उस असंस्कारी घृणित कुल में जन्म लेकर भी हरिकेशबल श्रेष्ठ गुणों के धारक, जितेंद्रिय मुनि बन गए थे।

इरि-एसण-भासाए, उच्चार-समिईसु य।
जओ आयाण-निक्खेवे, संजओ सुसमाहिओ।।2।।
मण-गुत्तो वय-गुत्तो, काय-गुत्तो जिइंदिओ।
भिक्खट्ठा बंभ-इज्जम्मि, जन्नवाडमुवट्ठिओ।।3।।

भावार्थ - ईर्या, एषणा, भाषा, उच्चार तथा आदान निक्षेपण समिति, इन पाँच समितियों में यत्नशील, संयमशील एवं समाधियुक्त थे।

मन, वचन, काय से गुप्त एवं जितेंद्रिय (इंद्रियों को जीतने वाले) मुनि भिक्षा के लिए जन्नवाड (यज्ञमंडप) में आ पहुँचे, जहाँ ब्राह्मणों का यज्ञ हो रहा था।

इन दो गाथा का आशय है - केवल प्रतिज्ञा से या नाममात्र से ही हरिकेशबल मुनि नहीं थे, अपितु वे पाँच समिति और तीन गुप्तियों का सावधानीपूर्वक पूर्ण पालन करने वाले थे।

यज्ञमंडप में उपस्थित ब्राह्मणों द्वारा हरिकेशबल मुनि का उपहास

तं पासिऊणं एज्जंतं, तवेण परिसोसियं।
पंतोवहिउवगरणं, उवहसंति अणारिया।।4।।

भावार्थ - तपस्या से कृश देह, जीर्ण एवं मलिन वस्त्र, उपधि तथा उपकरण वाले मुनि को यज्ञ मंडप में उपस्थित देखकर अनार्य ब्राह्मण उनका उपहास करने (हँसने) लगे।

पासिऊणं एज्जंतं - एज्जंतं - आते हुए मुनि को, पासिऊणं - देखकर

तवेण परिसोसियं - बेला, तेला आदि उत्कृष्ट तप करने से जिसका शरीर सूख गया तथा रक्त-मांस सूखने से कृश हो गया हो।

पतोवहिउवगरणं - इसमें तीन शब्द हैं - (1) प्रांत - जीर्ण एवं मलिन; (2) उपधि - साधु के पहनने योग्य वस्त्र, पात्र आदि; (3) उपकरण - साधु के रजोहरण, चिलमिलिका (मच्छरदानी) आदि जो जीवों की हिंसा से बचने के लिए संयम जीवन में उपकारी है।

अणारिया - 'अनार्य' शब्द जातिमद, अधर्म, असभ्य आचरण करने वाले अव्रती, अब्रह्मचारी, बाल अज्ञानी के अर्थ में कहा गया है। किंतु केवल बाहरी स्वरूप को देखकर उपहास करना और अपशब्द बोलना सभ्यजन के व्यवहार रूप नहीं होता है।

कयरे तुमं इय अदंसणिज्जे?, काए व आसा इह मागओ सि।
ओमचेलया! पंसुपिसायभूया, गच्छ क्खलाहि किमिहं ठिओ सि?।।7।।

भावार्थ - 'अरे अदर्शनीय! तू कौन है? यहाँ तू किस आशा से आया है? अधनंगे, तुम पशु-पिशाच (भूत) जैसे लग रहे हो। जाओ, हट जाओ! यहाँ क्यों खड़े हो?'

पंसुपिसायभूया - लौकिक मान्यता के अनुसार पिशाच की दाढ़ी, नख और रोए लंबे होते हैं। मुनि अपने शरीर की सार-सँभाल नहीं करते थे। इसलिए धूल से सने हुए होने के कारण वे ब्राह्मणों को पिशाच जैसे लग रहे थे।

क्खलाहि - तिरस्कारयुक्त वचन है - यहाँ से हट जाओ! यहाँ क्यों खड़े हो?

- क्रमशः

चित्तवृत्ति के संशोधन का उपाय क्या है? प्रभु महावीर से गौतम स्वामी ने ऐसे संशोधन का उपाय पूछा, जिससे व्यक्ति शांत एवं सुरक्षित हो जाए। भगवान ने कहा कि उपाय है। हम भी जानते हैं कि यदि कोई रोग होता है तो उसका इलाज भी होता है। कोई ऐसी बीमारी नहीं है कि जिसका इलाज न हो। कैंसर के लिए कहा जाता था कि उसका इलाज नहीं होता, किंतु यदि वह प्रारंभिक स्तर पर ही हो और ज्ञात हो जाए तो उसका भी इलाज होता है। एक समय था जब टी.बी. का इलाज नहीं था, पर आज होता है। वैसे ही हमारे दु:ख और तनाव का इलाज है। जब तक तनाव है, तब तक बीमारी भी है। यदि हम 'अटेंशन' हो जाएँ तो टेंशन दूर हो जाए अर्थात् यदि बीमारी है, किंतु हम सजग हैं, सतर्क हैं तो निदान हो सकता है।

- परम पूज्य आचार्य प्रवर 1008 श्री रामलाल जी म.सा.

क्षमाशील प्रकृति

संस्कार सौरभ

धर्ममूर्ति आनंद कुमारी

15-16 सितंबर 2024 अंक से आगे...

(आप सभी के समक्ष 'धर्ममूर्ति आनंद कुमारी' धारावाहिक के रूप में प्रकाशित हो रहा है जिसमें आचार्य श्री हुक्मीचंद जी म.सा. की प्रथम शिष्या महासती श्री रंगू जी म.सा. की पट्टधर महासती श्री आनंद कँवर जी म.सा. का प्रेरक जीवन-चारित्र प्रतिमाह पाठकों के समक्ष प्रस्तुत किया जा रहा है।)

जे ठाणा चातुर्मास समाप्त होने पर साध्वी श्री आनंद कुमारी जी ने अजमेर, किशनगढ़ आदि धर्मप्रिय क्षेत्रों को पावन करते हुए जयपुर की ओर विहार कर दिया। जयपुर विद्या का केंद्र है। यहाँ अनेकानेक राजक्रांतियाँ और धर्मक्रांतियाँ हुई हैं। क्षत्रिय राजाओं की यहाँ प्रबल धाक जमी हुई थी। मुगलों के शासनकाल में भी जयपुर ने काफी उन्नति की थी। इस क्षेत्र को 'राजपूताना की काशी' कहते हैं। श्वेतांबर एवं दिगंबर जैनों के यहाँ काफी घर हैं। प्राचीन समय में यहाँ के कई जैन राजमंत्री रह चुके हैं। जयपुर ने अपने जन्मकाल से अब तक कई धूप-छाँव के खेल देखे हैं।

उस समय जयपुर का मार्ग वैसे तो सीधी सड़क का था, पर रास्ते में कई गाँव सड़क से दूर पड़ जाते थे। कई गाँव ऐसे थे जहाँ जैनियों का एक भी घर नहीं था। फिर भी अनेक ग्रामीण लोग बड़ी भावुकता से जैन साधु-साध्वियों को आहारादि देते और कई यों ही रूखा-सा जवाब दे देते। सूर्योदय होते ही साध्वीवर्याएँ चल पड़तीं। चलते-चलते दोपहर हो जाती तो कहीं गाँव आता तो वहाँ कुछ देर रुककर आगे चल पड़तीं। मार्ग में कहीं कोई व्यवस्था नहीं, कहीं उपहास और तिरस्कार तो कहीं सत्कार और मीठे वचन से स्वागत। साधु-जीवन का मार्ग ऐसा ही है। **'कहीं घी घणा तो कहीं मुट्ठी चना।'** साध्वी बड़ी आनंद कुमारी जी म.सा. थक जातीं, पर साथ में छोटी साध्वी श्री आनंद कुमारी जी ऐसी विवेकशीला थीं कि पहले ही पहुँचकर मकान वगैरह की गवेषणा कर लेतीं और झोली में पात्र डालकर पहले से तैयार रहतीं। आपकी आदर्श सेवावृत्ति का सहारा पाकर सब साध्वियाँ सकुशल जयपुर पहुँचीं।

जयपुर की धर्मशील जनता ने आपका खूब स्वागत किया। संघ के लोगों में काफी उत्साह था। उन्होंने जयपुर चातुर्मास के लिए अत्यंत आग्रह किया। जयपुर जैसे समर्थ संघ ने आपका चातुर्मास करा ही लिया।

जयपुर में रेतीली भूमि व पहाड़ होने से गर्मी खूब पड़ती थी और वर्षा कम होती थी। इस वर्ष भी उष्णता

अधिक थी। गर्मी से सारी सड़कें तप जाती थीं। चातुर्मास काल में भी दिन में 10 बजे बाद सड़कों पर चलना कठिन हो जाता। रात को भी गर्मी का काफी परीषह रहता। साध्वियों की तो ऐसे मौके पर ही परीक्षा होती है। बहुत दिन तक सूर्य ने अपनी प्रचंड किरणें फैलाकर तपाया, आखिर वृष्टि हुई।

एक तरफ जलवृष्टि हो रही थी, तो दूसरी तरफ महासतीजी के धर्म-प्रवचनों की वृष्टि हो रही थी। धर्मपिपासु जनता सुनकर गद्‌गद् हो जाती। धर्मोपदेश की ओर आपका जितना ध्यान था, उतना ही शास्त्राध्ययन की ओर भी था। शास्त्रों का अध्ययन करते समय आप एकाग्र हो जातीं। उस समय की मुखमुद्रा बड़ी ही दर्शनीय होती थी।

एक समय साध्वी श्री आनंद कुमारी जी म.सा. शास्त्र का स्वाध्याय कर रही थीं, इतने में ही एक साध्वीजी ने जिनका मस्तिष्क कुछ विकृत-सा हो रहा था, एकदम क्रोध में आकर पास में पड़ा हुआ पत्थर अपना सिर फोड़ने के लिए उठाया। आपने जैसे ही यह दृश्य देखा तो तुरंत उठीं और उन साध्वीजी के हाथ पकड़ लिए। आपने तो इस अभिप्राय से हाथ पकड़ा था कि कहीं क्रोध में आकर वे साध्वीजी अपना सिर न फोड़ लें। लेकिन उन साध्वीजी ने जोर से हल्ला मचाया और कहने लगीं— ''देखो, देखो! यह मुझे पीट रही है।''

मनुष्य चाहे कहीं भी क्यों न चला जाए, कर्मों की गति बड़ी विचित्र होती है। चाहे वह पाताल में घुस जाए, चाहे स्वर्ग में चला जाए, चाहे ऊँचे से ऊँचा साधक बन जाए, चाहे गँवारों की टोली में फिरता रहे, फिर भी कर्म किसी को छोड़ते नहीं हैं। साधक का जीवन बहुत उच्च जीवन है। फिर भी कर्मफल तो यहाँ भी पीछे लगा रहता है। उक्त साध्वीजी ने कितना उच्च जीवन बिताने का बाना ले रखा था, फिर भी कर्मों के उदय से उनका चित्त विक्षिप्त-सा हो गया था। यह संभव नहीं है कि कोई किसी के कर्मों को दूर कर दे। अपनी तो क्या, इंद्र की भी शक्ति नहीं कि किसी के बुरे कर्मों को अच्छे रूप में पलट दे और अच्छे कर्मों को बुरे रूप में परिवर्तित कर दे। कर्मों की दुनिया में रहकर मनुष्य अपनी पूर्ण स्वतंत्रता को खो बैठता है। उनसे पिंड छुड़ाकर वह स्वाधीन मुक्तात्मा बन सकता है। समर्थ आत्माओं में इतना बल तो जरूर है कि वे अपने कर्म बंध के कारणों को ढूँढ़कर उनसे बचते हैं और उन्हें तोड़ने का उपाय करते हैं।

हाँ, तो साध्वी श्री आनंद कुमारी जी म.सा. की क्षमाशील प्रकृति से यह दृश्य न देखा गया और एक मिनट भी अगर वे देरी करती तो न जाने क्या का क्या अनर्थ हो जाता। बदले में साध्वी श्री बड़ी आनंद कुमारी जी ने आपसे कहा कि इनके हाथ से तुमने पत्थर क्यों छीना? तुम इनको जानती नहीं थी? अब लोग क्या कहेंगे कि फलानी साध्वी अमुक साध्वी का सिर फोड़ रही थी! यह उपकार करने के बदले उपहार मिलेगा। पर छोटी आनंद कुमारी जी म.सा. ने बड़े ही विनोदपूर्ण ढंग से कहा— ''यह तो अपना मस्तक फोड़ रही थी, पर मैं तो समझदार सामने बैठी थी। अगर मैं थोड़ी-सी भी चूक करती तो यह तो अपने सिर पर दे मारती और खून की धारा बहने लगती। मैंने ऐसा करके अपने कर्तव्य का पालन किया है। कोई भलाई का काम करते हुए भी गले में बुराई का हार पहना दे तो भले ही पहना दे। मैं उस हार को सहर्ष स्वीकार करूँगी। दुनिया की आलोचना से मैं क्यों डरूँ? दुनिया तो चढ़े हुए की भी नुक्ता-चीनी करती है और पैदल चलने वाले की भी।'' धन्य है छोटी साध्वी श्री आनंद कुमारी जी म.सा. की कर्तव्यनिष्ठा। मानो आपकी कवि भारवि की यह उक्ति मार्ग दिखा रही थी—

सर्वथा स्वहितमाचरणीय किं करिष्यति जनो बहुजल्पः।

अर्थात् मनुष्य को हमेशा अपने हित का, अपने कर्तव्य का आचरण करना चाहिए। बहुत बड़बड़ाने वाला मनुष्य नुक्ता-चीनी करके उसका क्या कर सकता है?

आपका उत्तर सुनकर महासती श्री बड़ी आनंद कुमारी जी म.सा. मन ही मन आपकी सराहना करते हुए

सोच रही थीं कि इसके हृदय में कितनी क्षमा है! अपकार करने वाले पर भी यह उपकार की वर्षा करती है। काँटा चुभाने वाले पर भी फूल बरसाती है।

वास्तव में क्षमा अहिंसा की उच्चत्तम साधना है। श्रमण के 10 धर्मों में क्षमा सर्वप्रथम धर्म है। उसे भगवान महावीर ने साधुता के गुणों में सबसे पहला स्थान दिया है। इतना ही नहीं भगवान महावीर ने अपने जीवन में 12 वर्ष की कठिन साधना में क्षमा का प्रयोग किया है। कहा है- *''क्षमा खड्ग करे यस्य दुर्जनः किं करिष्यति?''* अर्थात् जिसके हृदय में क्षमा रूपी तलवार है, दुर्जन उसका क्या कर सकता है, क्या बिगाड़ सकता है?

महावीर प्रभु को भी कष्ट देने एवं उनकी क्षमा की कसौटी करने हेतु कई लोग आए थे, पर अंत में वे झुककर, नतमस्तक होकर गए। क्षमावान मनुष्य के समान विकराल क्रोधी और लड़ाकू व्यक्ति का मन पलट सकता है। उसकी क्षमा के सामने क्रोध का जहर भी अमृत बन जाता है।

छोटी आनंद कुमारी जी म.सा. पर उन सतीजी ने झूठा आरोप लगाया और भला-बुरा भी कहा, पर आखिरकार एक दिन वही सतीजी आकर उनसे कहने लगीं—''मैंने आपको उस दिन व्यर्थ ही मुसीबत में डाला। मैं खुद अपराधी थी, भान भूल गई थी। यह तो ठीक हुआ कि आपने मेरा हाथ पकड़कर रोक दिया, नहीं तो कौन जानता था कि मैं क्या कर बैठती! उस समय मैं अपने आपे में नहीं थी। आप मेरा अपराध क्षमा करना। आपने तो मुझ पर महान उपकार किया है। मैं आपको बहुत अयोग्य वचन भी कह देती हूँ, पर आपने मुझे कभी कुछ गलत नहीं कहा। आपने मुझ जैसी पगली को भी निभाया और मुझ पर स्नेह बरसाया।''

छोटी आनंद कुमारी जी म.सा. ने उक्त सतीजी के मर्माहत हृदय को सांत्वना दी और कहा—''यह तो हो जाता है। मनुष्य भूल का पुतला है। गलतियाँ होती रहती हैं। आपका दिल तो सरल और साफ है। इसलिए अपराध अपने आप पश्चात्ताप के पानी से धुल गया है। कोई चिंता न करिए।''

यह है जीवन की ऊँचाइयाँ मापने का पैमाना! छोटी आनंद कुमारी जी म.सा. के जीवन की इन घटनाओं को देखकर उनके विशाल हृदय, उदारता और साधुता का बोध होता है। धन्य हैं ऐसी पवित्र आत्माओं को!

जयपुर का चातुर्मास समाप्त हुआ। यह चातुर्मास छोटी आनंद कुमारी जी म.सा. के जीवन-विकास की दृष्टि से बड़ा शानदार रहा। यहाँ की बहनों में जो धार्मिक भावनाएँ दबी पड़ी थीं वे आपके सदुपदेशों का सहारा पाकर पुनः जाग उठी। विहार की तैयारी होने लगी। जनता आपके पुनः दर्शनों के लिए विह्वल हो रही थी। विहार में भाइयों का तो कहना ही क्या! जिन भद्र महिलाओं ने कभी जयपुर की सड़क नहीं देखी थी, वे भी कई मील तक पहुँचाने आईं। यह है सच्ची साधुता और सरलता का सच्चा आकर्षण! प्रेमपूर्ण व्यक्तित्व हर जगह जादू-सा चमत्कार दिखाता ही है।

साभार- धर्ममूर्ति आनंदकुमारी

-क्रमशः

जब मन में यह भाव होता है कि क्या फरक पड़ता है और इस प्रकार प्रमाद किया जाता है तब आत्मा की हिंसा तो हो ही जाती है साथ ही आत्मा की मृत्यु हो जाती है। यदि विवेक रखकर यतनापूर्वक चलें तो उस स्थिति में किसी प्राणी का वध-अतिपात हो भी जाए तो वहाँ भाव-हिंसा नहीं होने से पाप कर्म का बंध नहीं होगा। यदि देखकर यतनापूर्वक नहीं चल रहे हैं तो चाहे हिंसा नहीं भी हुई, जीव की विराधना नहीं भी हुई, फिर भी प्रमाद के कारण कर्म-बंध, पाप कर्म का बंध होगा।

-परम पूज्य आचार्य प्रवर 1008 श्री रामलाल जी म.सा.

KIDS CORNER

बालमन में उपजे ज्ञान

-मोनिका जय ओस्तवाल, ब्यावर

जय जिनेंद्र सा!

नन्हें बालमन में धर्म की ज्योति जलाना भव-भवांतर का अंधकार मिटाने का पुरुषार्थ है। यह धारावाहिक निरंतर नन्हें बालकों के मन में धर्म के प्रति जिज्ञासा, विश्वास जगा रहा है और साथ ही यह संदेश दे रहा है कि समाज का प्रत्येक व्यक्ति यदि पुरुषार्थ करे तो हम एक सुदृढ़, संस्कारी धर्म के ज्ञान से ओत-प्रोत भावी पीढ़ी का निर्माण कर सकते हैं।

आज सभी बच्चों के चेहरे पर एक अलग ही प्रकार का तेज था।

आते ही सभी बच्चे एक साथ - जय जिनेंद्र, आंटी!

नीलिमा- आंटी! हम सबने 21 दिन तक विधिवत् सामायिक की।

पंकज- हमें ऐसा लगा कि हम अलग ही दुनिया में हैं। न किसी से बात करना, न लड़ाई, न जलन, न टी.वी. देखने का खयाल...।

नितिन- आंटी, वो 48 मिनट हमें ऐसी ऊर्जा प्रदान करते हैं जिससे हम पूरे दिन शांत रहते हैं। किसी ने कुछ कहा तो भी नजरअंदाज कर देते हैं।

(सौरभ की माताजी समझ चुकी थी कि बच्चों ने शुद्ध सामायिक की है और ये सब उसी ऊर्जा का परिणाम था।)

सौरभ- बिलकुल सही कहा दोस्तो। मेरी मम्मी-पापा, दादाजी सभी तो रोज सामायिक करते हैं। इसी कारण वे इतने शांत और सुलझे हुए हैं।

सौरभ की माताजी- आप सभी ने सामायिक करना सीखा, परंतु अब इसे रोज करने का लक्ष्य रखें।

(सभी ने हाँ में हाँ मिलाई।)

सौरभ- अब हम आगे क्या सीखने वाले हैं?

(सभी बच्चों की जिज्ञासा और बढ़ चुकी थी।)

नितिन- आंटी! अब तो हमें और भी ज्यादा मजा आ रहा है। बताइए हम आगे क्या सीखने वाले हैं?

सौरभ की माताजी- आप सभी आगे कई प्रार्थनाएँ, 12 भावना, मेरी भावना, जैन सिद्धांत बत्तीसी, नौ तत्त्व आदि सीख सकते हो। थोड़े और बड़े होने पर आपको आगमों के अध्ययन की ओर बढ़कर थोकड़ों आदि का ज्ञानार्जन करना श्रेष्ठ है। इससे आप ज्ञानवान एवं क्रियावान सुश्रावक बनकर जैन धर्म के सच्चे हितैषी तो बनेंगे ही, साथ ही आप अपना जीवन सार्थक कर पाएँगे। ज्ञानार्जन की कोई आयु व सीमा नहीं होती। अतः सीखते रहिए और बढ़ते रहिए।

नीलिमा- ऐसा लग रहा है कि यहाँ तो हमारी स्कूल से भी ज्यादा कोर्स है।

(सभी बच्चे हँसने लगे।)

सौरभ की माताजी- जितनी स्कूल की पढ़ाई जरूरी है उतना ही जरूरी ये सब सीखना भी है। ये हमें सच्चा और आध्यात्मिक ज्ञान प्रदान करते हैं, जिससे हम स्वयं भी कभी गलत नहीं करेंगे और न ही दूसरों को करने देंगे।

पंकज- जैसे सौरभ ने हमको समझाया जब हम इसका मजाक बना रहे थे कि चातुर्मास में बिना रात में खाए व बिना पार्टी के कैसे रह पाओगे।

सौरभ- बिलकुल सही बात। अब हम सब मिलकर बाकी बच्चों तक भी जैन धर्म की शिक्षाएँ पहुँचाएँगे, जिससे सभी अच्छे बच्चे बन सकें।

प्रतिज्ञा

1. कम से कम अपने दो दोस्तों को जैन धर्म के मूल सिद्धांत समझाकर प्रतिज्ञा करवाना।
2. जितना भी धर्म व ज्ञान-ध्यान सीखा है उसे प्रतिदिन 15 मिनट दोहराना।

बच्चो! लंबे समय से आपको ज्ञानार्जन करवाते-करवाते आज हम इस स्टेज पर पहुँच चुके हैं कि आप सभी गर्व से कह सकते हैं कि हमें जैन धर्म का मूलभूत ज्ञान हो गया है। चूँकि सीखने की कोई आयु व सीमा नहीं होती, अतः आप अपना ज्ञानार्जन बंद नहीं करें और आगे से आगे बढ़ते जाएँ। हमारा यह सफर इस अंक के साथ समाप्त हो रहा है, लेकिन आपके सीखने का क्रम नहीं टूटना चाहिए। इस हेतु अभिभावकों से भी निवेदन है कि बच्चों को ज्ञान-ध्यान सीखने की दिशा में प्रेरित करते रहें और जैन धर्म के भावी कर्णधारों को उन्नति का मार्ग दिखाते रहें।

दोषी कौन?

-परम पूज्य आचार्य प्रवर 1008 श्री नानालाल जी म.सा.

एक धर्मसभा की घटना है। धर्मस्थान में सब तरह के व्यक्ति पहुँचते हैं। सेठ, साहूकार, राजा, महाराजा, नेता, गरीब, मजदूर, राह के भिखारी आदि सब आते हैं। धर्मस्थान सबको प्रश्रय देता है, सब आत्मसाधना के अधिकारी हैं। धर्मस्थान गंगा के समान होता है। वहाँ भेदभाव नहीं होना चाहिए। संतजन सबको समभाव से उपदेश देते हैं।

एक सेठ धर्मस्थान में आया। वह आर्थिक दृष्टि से बड़ा सुदृढ़ था। सेठ ने रात्रि के समय पौषध किया और कंठा उतारकर अपने पास रख लिया। दूसरा व्यक्ति जब धर्मस्थान में आया था तब उसकी भावना मलिन नहीं थी परंतु सेठ का कंठा देखकर उसके मन में मलिन भावना आ गई। उसने सोचा—''मैं बहुत दुखी हूँ, बाल-बच्चों का भरण-पोषण भी नहीं कर पाता हूँ, मेरे पास साधन नहीं हैं, आजीविका चलती नहीं, कोई उधार भी नहीं देता। क्या करूँ? कैसे परिवार का निर्वाह करूँ? क्यों न सेठजी का यह कंठा चुपके से उठा लूँ!''

धर्मस्थान में आने से भावना पवित्र बननी चाहिए, परंतु परिस्थितिवश उस भाई के दिल में मलिन भावना आ गई। वर्षा में सब वनस्पति हरी-भरी हो जाती है, परंतु जवासा सूखता चला जाता है। परिस्थिति और संयोग होने के कारण उस व्यक्ति के दिल में पाप आ गया और उसने वह कंठा उठा लिया।

सेठ उस समय पौषध में थे। धर्मध्यान की भावनाएँ प्रबल थी। सेठ ने उसे कंठा उठाते हुए देख भी लिया था, परंतु सेठ चुपचाप रहा। उसने विचार किया—''इस समय मैं व्रत में हूँ। कंठे को मैंने उतार रखा है। वह अभी मेरा नहीं है।''

सेठ शांतभाव से पौषध में स्थिर रहा। उसने किसी से कोई चर्चा नहीं की। कितनी विशालता है सेठ के दिल की। आज तो परिस्थिति कुछ और ही है। यहाँ भाई-बहनें व्याख्यान श्रवण कर रहे हैं, परंतु बहुतों का ध्यान शायद अपने जूतों और चप्पलों की ओर है कि कोई उन्हें उठा न ले जाए। सेठ का कंठा किसी अन्य ने उसकी आँखों के सामने ले लिया, परंतु सेठ ने किसी से चर्चा तक नहीं की। कितना बड़ा है उसका दिल!

वह व्यक्ति कंठा चुराकर चला गया। लेकिन उसके मन में उथल-पुथल मच गई। वह सोचने लगा—''मैंने बड़ा भारी पाप किया है। धर्मस्थान में चोरी की है। अन्य स्थान पर किया हुआ पाप धर्मस्थान में आकर छुड़ाया जाता है। धर्मस्थान में किया हुआ पाप तो वज्रलेप होता है। उससे छुटकारा कहाँ मिलेगा?'' वह अपने आपको कोस रहा था और घबरा भी रहा था। उसे भय था कि प्रात:काल पौषध पारकर सेठ घर आएगा तो मुझे पकड़वाकर दंडित कराएगा। शंका और भय के कारण वह आकुल-व्याकुल था। उसका चित्त अशांत था। वह पाप करना नहीं चाहता था, परंतु परिस्थिति ने उसे लाचार बना दिया था। वह आदतन अपराधी नहीं था। अत: उसे अपने इस कार्य पर बहुत खेद हो रहा था।

प्रात:काल सेठ पौषध पार कर अपने घर पहुँचा। सेठ के गले में कंठा न देखकर परिवार और दुकान के लोगों ने पूछा तो सेठ ने कहा—''चिंता न करो, वह

ठिकाने पर है।'' सेठ ने गंभीर दृष्टि से विचार किया—''इनसान परिस्थितियें का दास है। वह पाप करना नहीं चाहता, परंतु परिस्थितियाँ उसे लालची बना देती हैं। उस व्यक्ति ने कंठा चुरा लिया है, निश्चित ही वह बहुत परेशान और दु:खी होगा। यह अपराध मेरा है कि मैंने संपन्न होते हुए भी दूसरे साधार्मिक भाइयों की सार-सँभाल नहीं की। यदि मैं पहले ही अपने इस कर्तव्य का पालन करता तो उस व्यक्ति को यह पाप करने का प्रसंग नहीं आता।'' सेठ को अपने साधार्मिक के प्रति उपेक्षा-भाव रखने का पश्चात्ताप हो रहा था। उधर वह व्यक्ति भी पश्चात्ताप कर रहा था, परंतु उसे अपनी समस्या का समाधान नहीं मिल रहा था। दोपहर तक उसने राह देखी कि सेठ क्या करता है। सेठ के घर के पास होकर वह निकला, सेठ की और उसकी दृष्टि मिली भी, लेकिन सेठ ने कुछ नहीं कहा। तब उसके मन में आया कि सेठ का दिल बहुत बड़ा है। यह कुछ कहने वाला नहीं है। वह कुछ आश्वस्त हुआ।

अब उसके सामने समस्या है कि इस कंठे को गिरवी रखकर रुपए कहाँ से प्राप्त करे। उसने सोचा कि यदि अन्यत्र कहीं गिरवी रखता हूँ तो चोरी की शंका में पकड़वा दिया जाऊँगा। अत: उसी बड़े दिल वाले सेठ के यहाँ कंठा गिरवी रखकर रुपए प्राप्त करूँ तो ठीक रहेगा।

दिन के पिछले भाग में वह कंठा लेकर उसी सेठ के पास गया। लज्जित और भयभीत होते हुए उसने कहा—''मैं मुसीबत में फँसा हुआ हूँ। कृपया यह कंठा गिरवी रख लीजिए और दस हजार रुपए दे दीजिए।'' वह कंठा उसने उनके सामने रख लिया। सेठ समझ रहा था कि यह मेरा ही कंठा है, किंतु वह यह भी समझ रहा था कि यह व्यक्ति अत्यंत ही मुसीबत का मारा हुआ है। उसने कहा—''अच्छा तुम दस हजार रुपए ले जाओ और यह कंठा भी ले जाओ। मुझे तुम पर विश्वास है।'' उस व्यक्ति ने आग्रह करके कंठा सेठ के यहाँ गिरवी रख दिया और दस हजार रुपए ले लिए। वह व्यक्ति सोच रहा था कि यह सेठ सचमुच देव-पुरुष है। सेठ के विचारों में बहुत ही विशालता और उदारता आ गई थी। उसकी मानवता प्रबुद्ध हो उठी। स्वधर्मी वात्सल्य की उर्मियाँ उसके हृदय में हिलोरें ले रही थी, तभी ऐसा व्यवहार हो सकता है; अन्यथा अपना ही चुराया हुआ माल अपने यहाँ गिरवी रखने कोई आवे उस समय अन्य उसके प्रति कैसा और क्या व्यवहार करेंगे, यह मुझे बताने की आवश्यकता नहीं है।

वह सेठ और सेठानी मानवता का पाठ पढ़े हुए थे। सेठानी सेठ से दो कदम और आगे थी। उसने सेठ से कहा कि आपने अपने साधार्मिक भाई का कंठा गिरवी रखकर रुपए दिए। तब सेठ ने कहा कि मैं तो कंठा उसे वापस दे रहा था, परंतु वह बहुत आग्रह करने लगा, अतएव रख लिया। जिन परिवारों में धार्मिक संस्कार होते हैं, जहाँ स्वधर्मी बंधुओं के प्रति आत्मीय भावना जागृत रहती है, उन परिवारों के सदस्यों में कितनी उदार भावना आ जाती है, यह इस उदाहरण के द्वारा स्पष्ट हो जाता है।

कालांतर में उस व्यक्ति ने दस हजार रुपए से व्यापार शुरू किया और उसे लाभ होने लगा। उसने द्रव्य कमा लिया। उसके दिल पर सेठ के उदार व्यवहार का बहुत प्रभाव पड़ा था। वह सेठ को अपना उपकारी मान रहा था। कृतज्ञता के भार से दबा हुआ वह व्यक्ति दस हजार रुपए और उचित ब्याज लेकर सेठ के पास पहुँचा और उन्हें रुपए दे दिए। उस व्यक्ति की आँखों में आँसु आ गए और वह कहने लगा—''सेठ साहब! क्षमा करना, यह कंठा आपका ही है। मैंने परिस्थितिवश धर्मस्थान में इसे चुरा लिया था। मैं अत्यंत पापी, अधर्मी और अनैतिक हूँ। आप मानव नहीं, देव हैं। आपकी उदारता, दिल की विशालता और गंभीरता ने मेरे जीवन को बदल दिया है। मैं आपका अत्यंत आभारी हूँ। किन शब्दों में आपका आभार व्यक्त करूँ, समझ नहीं आता। सेठ साहब, मुझे क्षमा कीजिए।''

सेठ ने उसे आश्वासन देते हुए कहा—''भाई! अधीर न बनो। तुम्हारा कोई दोष नहीं है। यह तो मेरा अपराध है कि मैंने तुम्हारी सार-सँभाल नहीं की। अतएव तुम्हें गलत मार्ग पर कदम बढ़ाने के लिए मजबूर होना पड़ा।''

साभार- नानेशवाणी-46 (दृष्टांत सुधा)

महत्तम निर्जरा

आत्म जागृति एवं स्व-पर कल्याण का स्रोत

- पदमचंद गाँधी, जयपुर

प्रत्येक जीव अपनी क्रिया के द्वारा प्रतिपल शुभ एवं अशुभ कर्मों का बंधन करता है। कर्मों से दोष उत्पन्न होते हैं और दोषों से दुःख होता है। ये दोष आत्मा को वेष्टित करते हैं। उन कर्मों के क्षय का उपाय निर्जरा है। जैसे दूज का चाँद धीरे-धीरे कला का विकास करते-करते पूर्णिमा तक सोलह कलाओं को प्राप्त कर लेता है, ठीक उसी प्रकार निर्जरा के द्वारा आत्मा भी अपने गुणों पर आए हुए इन आवरणों को हटाते-हटाते एक दिन स्वच्छता, निर्मलता और पवित्रता को प्राप्त कर लेती है और वह सिद्ध, बुद्ध और मुक्त हो जाती है। क्षीर-नीर की तरह आत्मा के साथ एकरूप हुए कर्म पुद्गल जिस क्रिया द्वारा आंशिक रूप से क्षय किये जाएँ यानी आत्मा से अलग किये जाएँ, यही निर्जरा है अर्थात् तप रूपी अग्नि से आत्मा को निर्मल एवं पवित्र बनाना है। जीव स्वयं ही एकाकी कर्म करता है और अकेला ही भोगता है। उन कर्मों के बंधनों को तोड़ने के लिए पुरुषार्थ भी अकेला ही करता है। इसलिए कर्मों का क्षय केवल स्वयं ही कर सकता है और पूर्ण प्रकाशमान भी स्वयं अकेला ही होता है। संचित कर्मों का परिशोधन निर्जरा के बिना नहीं होता। कर्मों की निर्जरा तब ही संभव है जब आत्मा सम्यक् तप स्वरूप को समझकर उसे जीवन में उतारे। तप का संबंध आत्मा से है, आत्मा को शुद्ध करने से है। तत्त्वार्थसूत्र में कहा गया है—

'तवसा निर्जरा च'

तप से संवर और निर्जरा होती है। साधक संवर के द्वारा बाहर से आने वाले नये कर्मों को रोक लेता है और भीतर में रहे हुए कर्मों को निर्जरा (तप) द्वारा क्षय करता है अर्थात् तप की अग्नि में पूर्व अर्जित कर्म को सुखा देता है या नष्ट कर देता है। यही कर्मनिर्जरा है। निर्जरा तप का अनवरत अभ्यास करने से साधक के अन्तर में अचिंत्य, अद्भुत एवं अलौकिक आध्यात्मिक शक्ति का अजस्र स्रोत प्रकट होता है और निश्चित रूप से वह साधक अपने चरम लक्ष्य की प्राप्ति में सफल हो अनंत, अक्षय, अव्याबाध, सौख्य निधान मोक्ष पद को भी सहजता से प्राप्त कर लेता है।

निर्जरा हेतु पुरुषार्थ जरूरी है। आत्म-जागृति एवं स्व-पर कल्याण के लिए कर्मनिर्जरा का होना आवश्यक है। जो मलिनता आत्मा पर आवरण के रूप में चढी हुई है, जिस तरह रूई में से मिट्टी धुनने पर रूई धुनकर साफ हो जाती है, उसी प्रकार निर्जरा तप के अभ्यास से आत्मा निर्मल बन सकती है। इसके लिए हृदय में संवेग एवं प्यास का होना जरूरी है। हृदय में जितना तीव्र संवेग होता है, जितनी ही तीव्र प्यास होती है, जीव द्वारा मोक्ष के लिए प्रयत्न एवं पुरुषार्थ भी उतना ही तीव्र होता है।

बंधन की बंधन रूप से प्रतीति होने पर ही मुक्ति की स्वतंत्रता की चाह होती है। बंधन का बोध जितना तीव्र होता है, पिंजरे में बन्द पंछी की फड़फड़ाहट जितनी तेज होती है, मुक्ति की चाह उतनी ही तीव्र होती है। मुक्ति की तीव्र चाह ही मुक्ति के लिए सर्वात्मना प्रयत्न करने के लिए प्रेरित करती है। जो मोक्षार्थी होता है वह उग्र साधना से भी भय नहीं खाता, न ही वह साधना से हिचकिचाता है।

पाप कर्मों के कारण जीव भव-परंपरा में भटकता है। पाप का ताप अत्यन्त भयंकर होता है। उस पाप से पीड़ा होती है, लेकिन मन में तप का उत्साह होने से तप के ताप से उसे वह पीड़ा लगती नहीं है। कारण कि उसका लक्ष्य कर्मों की निर्जरा करना होता है। इसलिए वह तपजनित दुःख से नहीं घबराता है। तप में इच्छाओं का निरोध होता है। तप में आकुलता, व्याकुलता नहीं होती इसलिए इच्छा निरोध से उत्पन्न सुख अनुपम होता है। तप से देह बल क्षीण होने पर भी आत्मिक बल पुष्ट होता है। आत्मिक बल से दुःखों पर विजय प्राप्त होती है। श्री उत्तराध्ययन सूत्र अध्ययन 30 गाथा 6 स्पष्ट करती है— *'भव-कोडीसंचियं कम्मं तवसा निज्जरिज्जइ'*, अर्थात् करोड़ों भवों के संचित् कर्मों को तप खपाता है तथा आत्मप्रदेशों से अलग करता है। जब कर्म आत्मा से अलग हो जाते हैं तो निर्जरण होता है अर्थात् नोकर्म हो जाते हैं। यही कर्मों की निर्जरा है।

निर्जरा के उपाय :

निर्जरा कार्य है, तप कारण है। तप के द्वारा कर्मों की निर्जरा होती है। चूँकि कार्य-कारण संबंध है इसलिए तप करने के लिए देह का ममत्व त्याग, इन्द्रियों एवं कषायों पर विजय आवश्यक है। जब तक देह की ममता नहीं छूटती तब तक तप नहीं होता। देह की ममता त्याग से छूटती है। रसना के त्याग से तप एवं काया पर नियन्त्रण होता है। तप से काया की चंचलता को रोका जाता है। जब देह पर नियन्त्रण होता है तो इन्द्रियों पर विजय का लक्ष्य रहता है। मन में स्थिरता होने से कषायों से मुक्त हो सकते हैं क्योंकि आभ्यन्तर तप कषायमुक्ति का साधन एवं कर्मनिर्जरा का उपाय है। कर्मों की निर्जरा दो प्रकार से कर सकते हैं - पहला बाह्य तप तथा दूसरा आभ्यन्तर तप द्वारा।

स्व-कल्याण हेतु बाह्य तप को स्पष्ट करते हुए उववाई सूत्र में बताया गया है कि यदि बाह्य तप मुक्ति की अभिलाषा से तीव्र आन्तरिक रुचि से किया जाता है तो गौण रूप से आभ्यन्तर तप की साधना के साथ आत्मिक गुणों का विकास भी होता है। **'अनशन'** से मैत्री भावना का पोषण, कामुकता के उद्दीपन का अभाव, अन्न मोह का त्याग, दैहिक ममता पर विजय आदि गुण प्राप्त होते हैं। **'न्यूनोदरता'** से इच्छा-निरोध, इंद्रिय-निरोध, मनोबल की दृढ़ता आदि गुण सधते हैं। **'भिक्षाचर्या'** से आवश्यकता की पूर्ति या आपूर्ति की विविध स्थितियों में समभाव साधना की जा सकती है। **'रस-परित्याग'** से अनासक्ति की पुष्टि होती है और असाता वेदनीय का क्षय होता है। **'कायक्लेश'** से सुकुमारता के परिहार, सुखमय जीवन यापन के त्याग, ऋतु के अनुकूल शरीर को ढालने, कष्ट-सहिष्णुता आदि की साधना में सहायता मिलती है और **'प्रतिसंलीनता'** से चित्त शांति, एकाग्रता आदि गुण विकसित होते हैं।

इस प्रकार छह प्रकार के बाह्य निर्जरा के भेद बताए गए हैं। इनके द्वारा आहारादि बाह्य क्रियाओं के त्याग और प्रधानतः देह में कष्ट और शोषण होता है तथा मन को प्रिय लगने वाले पदार्थों का त्याग होता है। यह तप यदि अहंकार रहित, विकार एवं कषाय रहित होता है, बिना दिखावे एवं आडम्बर रहित होता है तो साधक मोक्षगामी होता है। विधि सहित किया जाने वाला बाह्य तप आत्मबल का प्रक्षालन करता है।

स्व-पर कल्याण हेतु उववाई सूत्र में स्पष्ट किया है कि साधक के जागृत रहते हुए भी साधना में किसी न किसी प्रकार के दूषण लग जाते हैं। उन दोषों के कारण हृदय में पश्चात्ताप होता है। साधक उनकी शुद्धि करना चाहता है। अतः वह गुरुजनों से विनयपूर्वक शुद्धि के उपाय पूछता है तथा **'प्रायश्चित्त'** लेता है। जो **'विनयवान'** होता है, **'वैयावृत्य'** कर सकता है। वैयावृत्य के अतिरिक्त

समय में विनयवान **'स्वाध्याय'** करता है और स्वाध्याय से एकाग्र चिंतन व **'ध्यान'** की दशा प्राप्त होती है। शुभ ध्यान से ही देह का **'त्याग'** (व्युत्सर्ग) होता है। निर्जरा हेतु आभ्यन्तर तप को स्पष्ट करते हुए कहा है— मन और वचन की अशुभ चेष्टाओं, क्रियाओं का त्याग और प्रशस्त चेष्टाओं का सेवन आभ्यन्तर तप है। इसका प्रयोजन आराधना त्रय में हुई स्खलनाओं की विशुद्धि के लिए **प्रायश्चित्त**, अंतर् में गुणों की प्रतिष्ठा और अभिव्यक्ति के लिए **विनय**, आत्मिक साधना शक्ति के विकास के लिए **वैयावृत्य**, ज्ञान की प्रीति के लिए **स्वाध्याय**, परिणाम की धारा को सुधारने के लिए **ध्यान** एवं ममत्व के विसर्जन के लिए **व्युत्सर्ग** करना है।

कर्मनिर्जरा के लिए दोनों तपों के द्वारा संयुक्त रूप से प्रयोजन की आवश्यकता होती है। जैसे शरीर से अलग रखने के लिए वेशभूषा नहीं होती है और वेशभूषा रहित शरीर की सुरक्षा एवं शोभा नहीं होती, ठीक वैसे ही बाह्य तप की सिद्धि से आभ्यन्तर तप की सुरक्षा, दीर्घता और तेजस्विता बढ़ती है और आभ्यन्तर तप के अवलम्बन से बाह्य तप सफल होता है।

निर्जरा पाप के ताप से छुटकारा पाने का साधन है। पर पदार्थों का मोह और विकारों की अग्नि अन्तःचेतना को जलाती है, क्योंकि उसमें फँसे रहने के कारण आत्मा विकृत हो जाती है। तप उस दशा में परिवर्तन ला देता है। तप आत्मा में फौलादी शक्ति का संचार कर देता है। तप से जब आत्मा तपती है तो उसका स्वरूप चरम उत्कर्ष को प्राप्त कर लेता है। तप से शारीरिक शुद्धता प्राप्त होती है और व्यक्ति निरोगता को प्राप्त करता है। तप का उद्देश्य केवल निर्जरा है। अतः एकान्त निर्जरा भाव से तप करना श्रेष्ठ है। तप संयम का रक्षाकवच है। इसके बिना संयम सुरक्षित और सुस्थिर नहीं रहता। इसलिए साधक के लिए तप का आचरण जरूरी है। कहा भी गया है- **'तप्यन्ते कर्माणि अनेन इति'** अर्थात् जिसके द्वारा कर्मों को तपाया जाए वह तप है। मनुस्मृति में भी कहा गया है - **'तपसा कल्मषं हंति'** तप से मलिनता नष्ट होती है।

कषायमुक्ति से निर्जरा :

उत्तराध्ययनसूत्र में कहा गया है - **'तवो जोई जीवो जोई ठाणं'** अर्थात् तप ज्योति है और आत्मा उस ज्योति का स्थान है। तप से आत्मशान्ति का विकास होता है। वाल्मीकि रामायण में भी कहा गया है - **'तपो हि परम श्रेय'** अर्थात् तप ही परम श्रेष्ठ कल्याणकारक है। स्व एवं पर कल्याण के लिए कषायों का उपशमन, नियंत्रण, विजय प्राप्ति, इन्द्रियों पर नियंत्रण, मन, वचन और काया का संयम रखना आदि आंतरिक तप हैं। स्वयं को जीतना, अपने आपको धिक्कारना, स्वनिंदा करना, की गई भूलों के लिए प्रायश्चित्त करना श्रेष्ठ तप हैं। करकंडु अणगार ने स्वयं से युद्ध किया, स्वयं को धिक्कारा और संवत्सरी के दिन रात्रि के बचे चावल के आहार में भी मुनि द्वारा थूकने पर समताभाव से आहार किया और अपने परिणाम को नहीं बिगड़ने दिया। इससे वे घाती कर्मों का क्षय करके 13वें गुणस्थान में पहुँचकर सर्वज्ञ बन गए और केवलज्ञान, केवलदर्शन प्राप्त कर लिया। उन्होंने भले ही आहार नहीं छोड़ा, लेकिन कषायों को त्याग दिया। कषाय अर्थात् जिससे आत्मा का पतन हो, जिससे संसार की अभिवृद्धि हो। आत्मा अपने स्वभाव को त्यागकर विभाव में परिणमन करे, नारकीय चतुर्गति में परिभ्रमण करे, आत्मा के निजगुण को नष्ट करे तथा जिनसे मुक्ति प्राप्त न कर सकें, वे कषाय कहलाते हैं। जिनमें मूलरूप से क्रोध, मान, माया, लोभ प्रमुख कषाय हैं। क्रोध प्रीति, बुद्धि एवं विवेक का नाश करता है। मान विनय का नाश करता है। माया से मित्रता नष्ट हो जाती है तथा लोभ से सभी गुणों का सर्वनाश हो जाता है।

इस प्रकार स्पष्ट है कि महत्तम निर्जरा को समझकर आत्म-जागरण की पात्रता प्राप्त कर स्व-पर का कल्याण कर सकते हैं और स्वभाव में पुनः स्थापित हो सकते हैं। आत्मा पर छाए कषायों का, कर्मों का, मलिनता का आवरण हटाकर तपरूपी निर्जरा से शुद्ध, पवित्र, निर्मल बना सकते हैं तथा चरम लक्ष्य केवलज्ञान और मोक्ष को प्राप्त कर सकते हैं। यही कल्याणकारी निर्जरा है।

महत्तम आनंद के सिद्धांत

- विनयचंद चोपड़ा, जयपुर

हमारी प्रगाढ़ हृदयेच्छा होनी चाहिए कि संसार के सभी प्राणियों को महत्तम आनंद हो और मेरे भी महत्तम आनंद मंगल हो। मेरे मंगल में सबका मंगल है और सबके मंगल में मेरा मंगल निहित है। यही महत्तम भाव होना चाहिए। हमें भावशून्य क्रियाओं का यथेष्ट फल नहीं मिलता। अशुभ भावों से निवृत्ति के लिए शुद्ध भावों में प्रवृत्ति आवश्यक है। निःसंदेह अशुभ भावों की तरह शुभ भाव भी विशिष्ट स्थिति में पहुँच जाने पर छूट जाते हैं और आत्मा शुद्ध भावों में स्थित हो जाती है।

जो मनुष्य समतामयी आत्मा के दर्शन करने वाला है वह महत्तम आनंद में रमण करता है। दूसरा पक्ष यह भी है कि जो महत्तम आनंद में रमण करता है वही समतामयी आत्मा के दर्शन करने वाला होता है।

जीव शब्द का पर्यायवाची शब्द है **सच्चिदानंद** अर्थात् **सत्**, **चित्त** और **आनंद**। जीव/चेतन का तीसरा गुण है आनंद। इंद्रियजनित आनंद क्षणिक होता है। वह आत्मा को आनंदमय नहीं बनाता और उसके परिणाम भी कटु होते हैं। इसलिए आत्मिक आनंद, महत्तम आनंद है, जो आत्मिक गुणों की अभिवृद्धि के फलस्वरूप उत्पन्न होता है और परिवर्द्धित होता रहता है। मानव को आनंद की अनुभूति तीन दशाओं में होती है - **जागृत**, **स्वप्न** और **सुषुप्त**। जागृत अवस्था में स्पष्ट अनुभव होता है। स्वप्न अवस्था में इंद्रियाँ सो जाती हैं और मन जागृत रहता है। इसी क्रम में सुषुप्त अवस्था में इंद्रियाँ और मन सब सो जाते हैं अर्थात् प्रगाढ़ निद्रा। यह आनंद अव्यक्त है किंतु इसकी अनुभूति अत्यंत सुखकर है। गहरी नींद के बाद शरीर हलका और बुद्धि तेज हो जाती है। उस समय मन और मस्तिष्क में यह आनंद निराला ही अनुभूत होता है।

महत्तम आनंद का तात्पर्य सहज, निर्विकार, स्थायी सुख है। अशुभ से शुभ, शुभ से शुभतर, शुभतर से शुभतम और शुद्ध भाव में पहुँचना आत्मा का परम उद्देश्य है। ज्ञान, दर्शन, चारित्र और तप के साथ महत्तम भावना जुड़ जाने से साधक उत्साह और संवेग के साथ साधना के राजमार्ग पर गति कर सकता है।

महत्तम आनंद परम उपलब्धि है। सुप्रयत्न और सही विचारधारा से ही व्यक्ति महत्तम आनंद की प्राप्ति कर सकता है।

निबंध के विषय (Any 1)

1. महावीर से राम तक 2. संयम के सजग प्रहरी 3. नए शोध की ओर बढ़ते कदम
4. चुनौतियों के शौकीन 5. गुरु आज्ञा ही सर्वोपरि

नियमावली -

1. प्रतिभागी किसी भी एक विषय भर 700-800 शब्दों में निबंध लिखें।
2. निबंध हिंदी/अंग्रेजी/गुजराती किसी भी एक भाषा में ही लिखें।
3. A4 size paper पर hand written / typed printout ही मान्य किया जाएगा।
4. लिखावट साफ, स्पष्ट होनी चाहिए। काली या नीली स्याही से लिखा निबंध मान्य होगा।
5. निबंध में शब्दों का चयन, वाक्यों की बनावट, Originality, सृजनात्मक लेखन आदि के आधार पर विजेता का चयन होगा ।

Position	Prize	Position	Prize
1	Rs. 21,000/-	4	Rs. 7,000/-
2	Rs. 15,000/-	5	Rs.5,000/-
3	Rs. 11,000/-	6 to 10	Rs.2,500/-
	11 to 70	Rs.1,500/-	

B अभिरामम् संवाद

PPT या Scrapbook का विषय संपूर्ण पुस्तक का सार होना चाहिए।

नियमावली -

1. संपूर्ण पुस्तक को पढ़कर PPT (power point presentation) या Scrap book (आकर्षक व रंगीन एल्बम) तैयार करना है।

A) PPT संबंधित नियमावली-

- PPT बनाते समय छवियों या चित्रों का उपयोग किया जा सकता है।
- 15-20 slides में PPT बनाना है।
- PPT में bullet points, font use, creativity, imagination, originality के आधार पर परिणाम घोषित किए जाएँगे।
- PPT का A4 page पर printout निकालकर उसे पूर्ण बंद लिफाफे में दिए गए पते पर भेंजे।

B) Scrapbook संबंधित नियमावली-

- Scrapbook का Size 12 inches × 12 inches और अधिकतम 20 पृष्ठ होने चाहिए।
- चित्र, मुद्रित सामग्री और विभिन्न सजावटी वस्तु (अचित्त) का उपयोग किया जा सकता है।

Position	Prize	Position	Prize
1	Rs. 21,000/-	4	Rs. 7,000/-
2	Rs. 15,000/-	5	Rs.5,000/-
3	Rs. 11,000/-	6 to 10	Rs.2,500/-
	11 to 70	Rs.2,100/-	

आयु वर्ग : 46 वर्ष से अधिक

'विचार आपके'

लेखन प्रतियोगिता

नियमावली -

1. अभिरामम् पुस्तक पढ़कर मन के विचारों को 200-300 शब्दों में लिखें।
2. लेख हिंदी/अंग्रेजी/गुजराती किसी भी एक भाषा में ही लिखें।
3. A4 size paper पर hand written / typed printout ही मान्य किया जाएगा।
3. लिखावट साफ, स्पष्ट होनी चाहिए। काली या नीली स्याही से लिखा लेख ही मान्य होगा।
4. लेख में शब्दों का चयन, वाक्यों की बनावट, Originality, सृजनात्मक लेखन आदि के आधार पर विजेताओं का चयन होगा।

Position	Prize	Position	Prize
1	Rs. 21,000/-	4	Rs. 7,000/-
2	Rs. 15,000/-	5	Rs.5,000/-
3	Rs. 11,000/-	6 to 10	Rs.2,500/-
	11 to 70	Rs.1,500/-	

आयु वर्ग : 12 वर्ष से अधिक सभी के लिए

अभिरामम् की सैर

घर बैठे ओपन बुक परीक्षा

नियमावली -

1. ओपन बुक प्रश्न पत्रिका के सभी नियम प्रश्न पुस्तिका में दिए गए हैं।
2. ऑरिजनल प्रश्न पुस्तिका ही मान्य की जाएगी।

1	Rs. 2,51,000/-	5	Rs. 21,000/-
2	Rs. 1,51,000/-	6 to 10	Rs. 11,000/-
3	Rs. 1,01,000/-	11 to 50	Rs. 4,100/-
4	Rs. 51,000/-	51 to 100	Rs. 2,100/-
	101 to 500	Rs. 1,100/-	

Entries भेजने का पता :-

67/61, 2nd Main Road, Rajajinagar Industrial Town, Bengaluru - 560010.

Ph : 7676650292

अभिरामम् पुस्तक कैसे प्राप्त करें ?

Registered Participants	Free (नि:शुल्क)
Individual (Non-Register)	Rs. 399/-
Business House, Industries, Community programs (Bulk order)	50% discount Rs. 200/-

अधिक जानकारी के लिए 7676650292 पर संपर्क करें।

जैन प्रतियोगिता समिति

Presents

भगवान महावीर के सिद्धांतों का अक्षुण्ण रूप

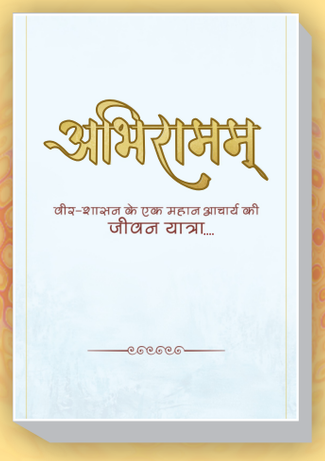

यह पुस्तक केवल उन्हीं लोगों के लिए हैं जो-

- अपने क्षेत्र में और आगे बढ़ना चाहते हैं...
- चुनौतियों को झेलने की क्षमता प्राप्त करना चाहते हैं...
- असफलताओं में भी ऊर्जावान बने रहना चाहते हैं...
- सोचने के तरीकों को तराशना चाहते हैं...

आस्था के साथ प्रारम्भ से अंत तक पूरी पुस्तक को एक बार पढ़ जाएं। आप में ये चारों गुण विकसित होने लगेंगे। फिर आप इसे जितनी बार पढ़ेंगे, उतने ही आप में गुण परिपक्व होते जाएंगे।

SCAN TO REGISTER

... Read it once, Grow at once ...

अभिरामम्

Presents

Aanंदम्

सभी प्रतियोगिताओं से संबंधित सामान्य नियमावली

1. हर प्रतियोगिता में भाग लेने हेतु रजिस्ट्रेशन कराना अनिवार्य है।
2. Aanंदम् में विभाजित प्रतियोगिताओं में निर्देशित आयु वर्ग ही भाग ले सकते हैं, आयु वर्ग में समावेश न होने पर प्रतिभागी का रजिस्ट्रेशन अमान्य किया जाएगा।
3. प्रत्येक प्रतिभागी को अपनी प्रस्तुति के साथ Leaflet के साथ संलग्न Reporting Format स्पष्ट और संपूर्ण जानकारी के साथ भेजना होगा। अधूरी या गलत जानकारी की सभी प्रस्तुतियाँ अमान्य की जाएगी।
   Entries के सभी पेजेस पर आपका नाम, contact no. शहर अवश्य लिखें। साथ ही हर पेज पर पेज नं. भी लिखें। सभी entries की hard copy submission ही मान्य होगा।
4. सभी प्रतियोगिताओं में प्रथम आधार originality ही रहेगा, विशेष किसी प्रतियोगिता में विषय की आवश्यकतानुसार internet से images, pictures लिए जा सकते हैं।
5. Entries कार्यालय में पहुँचने तक की सारी जिम्मेदारी प्रतिभागी की ही रहेगी। विलंब से पहुँचने या न पहुँचने पर कार्यालय जिम्मेदार नहीं रहेगा।
6. विजेता सूची में चयन होने पर आधार कार्ड आदि विवरण देने पर ही घोषित ईनाम राशि दी जाएगी।
7. Leaflet के साथ संलग्न offline form प्रभावना हेतु भेजा जा रहा है।
8. अपनी entries की postal tracking details स्वयं के पास भी रखें।
9. Aanंदम् से संबंधित सभी निर्णय, परिणाम घोषणा का अधिकार जैन प्रतियोगिता समिति को ही रहेगा।

☞ रजिस्ट्रेशन की अंतिम दिनांक 15 अक्टूबर 2024 है, इसके पश्चात कोई भी रजिस्ट्रेशन मान्य नहीं किए जाएँगे ।

☞ हर प्रतियोगिता की Entry 30 नवंबर 2024 से पूर्व दिए गए पते पर ही पहुँचनी अनिवार्य है।

प्रतियोगिता से संबंधित किसी भी जानकारी के लिए 7020661020 पर संपर्क करें

आयु वर्ग : 6-11 वर्ष

कौन बनेगा अभिरामम् रत्न

ज्ञानवर्धक और रोचक Quiz का आयोजन

☞ प्रतियोगिता को 3 Stages में विभाजित किया गया है।

- स्थानीय स्तर - 22 दिसंबर 2024
- अंचल स्तर - 29 दिसंबर 2024 से 26 जनवरी 2025 के बीच संभावित
- राष्ट्रीय स्तर - 9 फरवरी 2025 संभावित

विशेष नोट : रजिस्टर्ड प्रतिभागियों को सरल भाषा में Study Material दिया जाएगा।

नियमावली -

1. यह एक ग्रुप एक्टिविटी है ।
2. प्रत्येक प्रतिभागी को तैयारी के साथ Quiz में भाग लेना रहेगा।
   Registered participants की संख्यानुसार local स्तर पर groups बनाए जाएँगे, जिसका पूर्णाधिकार स्थानीय समन्वय समिति का ही रहेगा।

Position	Prize	Position	Prize
GROUP 1	Rs.44,000/-	GROUP 4	Rs.9,900/-
GROUP 2	Rs. 33,000/-	GROUP 5	Rs.7,700/-
GROUP 3	Rs. 11,000/-	GROUP (6 to 12)	Rs.5,500/-

नोट : इनाम की राशि विजेता ग्रुप में समान रूप से आवंटित की जाएगी।

आयु वर्ग : 12 - 25 वर्ष

I. Translate to communicate

नियमावली -

1. प्रतियोगिता विभाग (A) में भाग लेने वाले प्रतिभागी किसी भी एक विषय पर अपनी प्रस्तुति तैयार करें।
2. पुस्तक को translate करते समय पात्रों के नाम, स्थानों के नाम और प्रमुख शब्दों में एकरूपता बनाते हुए वास्तविकता (originality) और लेखन शैली को बनाए रखना है।
3. लिखावट साफ और स्पष्ट रखें, नीली या काली स्याही का ही उपयोग मान्य किया जाएगा।
4. A4 size paper पर hand written / typed printout ही मान्य किया जाएगा।
5. Translation में शब्दों का चयन, वाक्यों की बनावट, originality के आधार पर ही विजेता घोषित किए जाएँगे।

A नीचे दिए गए विशेष प्रसंग को अंग्रेजी /गुजराती या अन्य क्षेत्रीय भाषा में अनुवाद -(Any 1)

1. एक ऐसा सशक्त आह्वान हुआ, जिससे समाज दिखावामुक्त हुआ।
2. एक ऐसा आयाम जो समाज में व्याप्त 7 प्रकार की गलत आदतों को समाप्त कर देता है।
3. युवाचार्य जी द्वारा लिखी एक कविता जिससे उनकी सादगी स्पष्ट होती है।
4. कदम बढ़े वहीं जहाँ अंतरात्मा दे गवाही...
5. मुमुक्षु एक स्थान पर रहकर अधिकाधिक ज्ञानार्जन, गुण विकास एवं जीवन सृजन कर सकें - एक ऐसा प्रकल्प ।

B संपूर्ण पुस्तक को अंग्रेजी, गुजराती या अन्य क्षेत्रीय भाषा में अनुवाद करना -

Position	पुस्तक में दिए गए किसी विशेष प्रसंग को अंग्रेजी/अन्य भाषा में अनुवाद (A)	संपूर्ण पुस्तक का अंग्रेजी/अन्य भाषा में अनुवाद (B)
1	Rs. 21,000/-	Rs. 71,000/-
2	Rs. 15,000/-	Rs. 41,000/-
3	Rs. 11,000/-	Rs. 21,000/-
4	Rs. 7,000/-	Rs. 11,000/-
5	Rs. 3,000/-	Rs. 5,000/-
6 to 10	Rs. 2,000/-	Rs. 3,000/-
11 to 70	Rs. 1,100/-	Rs. 2,100/-

C

II. अभिरामम् कलाकृति

Poster Making Competition

पोस्टर के विषय - (दोनों आयु वर्ग के लिए)

1. प्रवचनों में श्रेष्ठ प्रवचन कैसा ?
2. प्रकृतियों की आपत्तियों में छिपा महापुरुष का निर्माण
3. समय की पाबंदी
4. शरीर को निरोग बनाने का एक ऐसा आयाम, जिससे जन-जन अनुभव करें परमानंद (आध्यात्मिक आरोग्यम्)

नियमावली -

1. यह प्रतियोगिता दो विभागों में बांटी गई है, 12-18 वर्ष, 19-25 वर्ष।
2. दिए गए विषयों में से किसी भी एक विषय पर A3 size sheet रंगारंग पोस्टर बनाएं।
3. पोस्टर में रंग भरने के लिए Pencil colours / Water colours / Pastel colours आदि में से किसी का भी उपयोग किया जा सकता है।
4. चयन किए गए विषय को creativity, imagination, neatness ध्यान में रखते हुए अपने पोस्टर पर उतारना है।
5. पोस्टर तैयार हो जाने पर Standard Size लिफाफे में डालकर भेजें।

Position	12 - 18 वर्ष	19 - 25 वर्ष
1	Rs. 11,000/-	Rs. 11,000/-
2	Rs. 7,000/-	Rs. 7,000/-
3	Rs. 5,000/-	Rs. 5,000/-
4	Rs. 3,100/-	Rs. 3,100/-
5	Rs. 2,100/-	Rs. 2,100/-
6 to 10	Rs. 1,500/-	Rs. 1,500/-
11 to 70	Rs. 1,100/-	Rs. 1,100/-

आयु वर्ग : 26 - 45 वर्ष

A अभिरामम् की बात कलम के साथ

(Essay writing competition)

महत्तम भाव

आत्मदृष्टि से देखना अध्यात्म

- डॉ. आभाकिरण गाँधी, धागड़मऊ

म - महान उद्देश्य
ह - हेतु
त्त - तल्लीन बनें
म - मुक्तिपथ को पाने के लिए
भा - भ्रांति मिटाएँ मन की
व - वमन करें कषायों का, वरण करें स्वयं का

महत्तम भाव बाहर की किसी विशेष अवस्था का नाम नहीं है और न ही किसी यूनिवर्सिटी की डिग्री है। अध्यात्म अर्थात् आत्मा का ज्ञान, जो जीव तत्त्व का बोध कराता है। अतः संसार को आत्मदृष्टि से देखना अध्यात्म है। जैसी मेरी आत्मा है वैसी ही सबकी आत्मा है। ऐसा जो जानता है, अनुभव करता है, वही सच्चा आध्यात्मिक है।

मानव प्रतिभा का पुंज है। इसी प्रतिभा ने उसकी प्रज्ञा, विवेक और समझ को जगाया है। जानना, मानना, समझना और करना, इन चारों में मनुष्य की प्रतिभा सर्वत्र कामयाब होती है। जानने की इच्छा ही जिज्ञासा है, जो दो रूप में उभरती है - पहला रूप है अर्थगत जिज्ञासा, जो मोक्ष एवं मोक्ष मार्ग के साधनों को जानने की इच्छा से संबंधित है तो दूसरी है अनर्थगत जिज्ञासा, जिसका लक्ष्य है संसार परिभ्रमण के कारणों को जानना। अंतर्जिज्ञासा से ज्ञान की प्राप्ति होती है और ज्ञान से श्रद्धा जागती है। श्रद्धा से रुचि बढ़ती है और तदनन्तर धर्म की प्रतीति अर्थात् स्पर्श होता है। यह अंतर्जिज्ञासा का आंतरिक प्रोसेस है। अंतःकरण में धर्मरुचि जागृत होने पर कदाचित् परिस्थितिवश आचरण न भी हो सके तो भी धर्मरुचि के भाव समाप्त नहीं होते। भावरुचि की तीव्रता ही हमें एक दिन आचरण की भूमिका तक पहुँचाती है।

अंतर्जिज्ञासा के अभाव में सच्ची श्रद्धा एवं धर्मरुचि के बिना किया गया धर्माचरण मात्र बाह्य क्रिया का द्योतक है। सत्य प्राप्ति हेतु सबसे पहले तीव्र लगन अवश्य हो तभी वह उत्कंठा लक्ष्य तक पहुँचाती है। जब तक तेज जिज्ञासा नहीं होगी तब तक कदम सुदृढ़ नहीं हो सकेंगे। जैसे भोजन बाद में है, भूख पहले है। पानी बाद में है, तृष्णा पहले है। संपत्ति बाद में है, समझ पहले है। प्राप्ति बाद में है, पात्रता पहले है। निश्चय बाद में है और संशय पहले है। ऐसे ही समाधान बाद में है, जिज्ञासा पहले है। आत्मा में परमात्मा बनने की पूर्ण पात्रता है किंतु उसका उद्घाटन जिज्ञासा से होता है। भाव के अभाव में धर्मश्रवण संभव तो है किंतु सुनने के बाद मन फिर उसी खटपट की दुनिया में लौट आता है। भाव बुद्धि से जो सुज्ञ हैं वे भीतर का दीपक रोशन कर लेते हैं। इस प्रकार भाव से पात्रता और पात्रता से प्राप्ति तक का मार्ग बहुत सरल है।

आकाश में सूर्य-चन्द्र, ग्रह-नक्षत्र और सितारे परिभ्रमण करते हैं, किंतु आकाश पर उनका कोई दाग नहीं रहता। पानी से भरे बादल गगन से बरसते हैं, किंतु गगन कभी उसके जल से नहीं भीगता। इतना ही नहीं, अनगिनत पक्षी आसमान में उड़ते हैं, किंतु उनके पंखों का एक भी निशान आसमान में नहीं रहता। जल से भरे

सरोवर में भी छोटे-बड़े अनेक जलचर जीव घूमते हैं, किंतु आज तक किसी ने उनके पाँवों के निशान जल पर नहीं देखे। इस प्रकार संसार के जल में या जीवन के नभ में चाहे कितने ही सगे-संबंध, मित्र-परिवार, स्वजन-परिजन के संग रहें और लंबे समय तक उनके साथ जीएँ, किंतु सदा असंग बने रहना चाहिए। निर्लेप जीवन की प्रेरणा देते हुए श्री आचारांग सूत्र का संदेश है कि सर्व प्रकार के संग का परित्याग करने हेतु **'मेरा कोई नहीं, मैं किसी का नहीं'**, इस भावना से मन को भावित करें। शांतचित्त से सोचें तो मालूम होगा कि यहाँ कोई किसी का संगी-साथी नहीं है। यह केवल मनुष्य जीवन की बात नहीं। एकेन्द्रिय अवस्था में भी पृथ्वी, पानी या निगोद आदि में जीव चाहे एक साथ असंख्य या अनंत की संख्या में पैदा होते हैं और एक साथ मर भी जाते हैं, परंतु एक की मृत्यु का दुःख दूसरा अनुभव नहीं कर सकता। इसी तरह कुत्ते, बिल्ली आदि पशुयोनि में भी जनम और मरण की संवेदना सबकी भिन्न-भिन्न है। इसका अर्थ यह हुआ कि आत्मा चाहे किसी भी योनि में और कितने ही संगी-साथियों के साथ जन्म लें, परंतु उसकी प्रकृति सर्वथा असंग रहने की है।

सेल्फ (अपने आप) से पूछो, आज तक के जीवन में संबंधों की पॉलिश और मालिश के अलावा और किया ही क्या है? क्या अंतिम क्षण तक भी मोह की चादर ओढ़े रखनी है? संगी-साथी, स्वजन-प्रियजन आदि के पीछे कब तक लगे रहना है? किससे आपको पार लगाना है? कब चढ़ोंगे मोक्ष मार्ग के सोपान पर? हालांकि संबंध नहीं उलझाते, परंतु उनके साथ जुड़ा हुआ मेरेपन का भाव जनम-मरण की संख्या बढ़ा देता है। जो कर्तव्य एवं आत्मकल्याण के लेबल तले ममता एवं कामना की बुद्धि काम करती है, वह आत्म-उत्थान से वंचित रहता है। माना कि जीवन की सरिता अनेक उतार-चढ़ावों से गुजरती है। कभी संगी-साथियों से भरपूर स्नेह-सम्मान मिलता है तो कभी ईर्ष्या, तिरस्कार एवं प्रतिशोध भी सहना पड़ता है। यहाँ पर स्नेहीजनों की उपेक्षा करने की बात नहीं है और न शत्रुओं से संबंधों के त्याग की बात है क्योंकि आवेश ठण्डा होते ही मोह पुनः जागृत हो उठता है। अपनी वास्तविकता महसूस करें कि मेरे संबंध मोह के ग्लू से चिपके हैं, कर्तव्य के स्तर पर खड़े हैं या आत्मकल्याण की सीढ़ियाँ चढ़ने के लिए तत्पर हैं? हमें संबंधों का ताना-बाना ममता या उपेक्षा के धागों से नहीं बल्कि कर्तव्य और आत्मकल्याण के हितकारी धागों से बुनना है। ध्यान रहे, यह मानव जन्म, आर्य क्षेत्र, उत्तम कुल, इन्द्रियों की परिपूर्णता, नीरोगी शरीर, सत्संग के सुअवसर बार-बार नहीं मिलेंगे। अतः प्रतिदिन मस्तिष्क के कम्प्यूटर में असंग पत्र फीड करना। आत्मा के अतिरिक्त सब कुछ मुझसे भिन्न हैं। यह देह भी मेरा नहीं है तो संगी-साथी मेरे कैसे हो सकते हैं? मैं अकेला हूँ, मैं असंग हूँ। मेरे पास जो कुछ भी है वह पर है, अनित्य है। केवल आत्मा ही नित्य है।

इस असंग पत्र को दोहराने से जीना आसान हो जाता है। फलतः कुसंस्कारों के एवं मोह के सुदृढ़ पहाड़ ढहते हैं और कदम मोक्ष मार्ग पर बढ़ते हैं। भाव का संपूर्ण अर्थ है साधना (लक्ष्य) की ओर बढ़ने का सतत प्रयास करना। इसलिए साधना मुख्य रूप आत्मनिर्भरता है। साधक अपने एवं अपनी आत्मशक्तियों पर पूर्ण विश्वास रखता है। जो दूसरों पर निर्भर रहता है उसका स्वबल घटता जाता है। साधना की नींव आत्मविश्वास है। नीतिशास्त्र कहते हैं कि जो अपने पर भरोसा करता है उसके भीतर उत्साह, लगन, दृढ़ता, साहस, धैर्य और परिश्रम, इन छह गुणों का प्रकटीकरण होता है। इसलिए साधक की शोभा आश्रित बनने में नहीं अपितु आश्रयदाता बनने में है। आश्रयदाता बनने के लिए पुरुषार्थवादी बनना आवश्यक है और पुरुषार्थ भी अपना ही काम आएगा, दूसरों का नहीं।

भावों के सुमनों से, भक्ति के दीप जले।
अध्यात्म के आलोक में, वीतरागता का पथ चुनें।।

अनेकांत का दार्शनिक दृष्टिकोण

- प्रो. सुमेरचंद जैन, बीकानेर

जैन दर्शन में सम्यक् दर्शन को बहुत महत्व दिया गया है। सम्यक् दर्शन क्या है? द्रव्य को जानने वाली दृष्टि द्रव्य में अटक जाती है तो वह मिथ्या दर्शन है और पर्याय को जानने वाली दृष्टि पर्याय में अटक जाती है तो वह मिथ्या दर्शन है। द्रव्य को जानने वाली दृष्टि द्रव्य का प्रतिपादन करती है, किंतु पर्याय को अस्वीकार नहीं करती और पर्याय को जानने वाली दृष्टि पर्याय का प्रतिपादन करती है, किंतु द्रव्य को अस्वीकार नहीं करती। दोनों दृष्टियाँ परस्पर सापेक्ष हो जाती हैं। इसका नाम है सम्यक् दर्शन।

अनेकांत और सम्यक् दर्शन दोनों समान अर्थ वाले बन जाते हैं। द्रव्यार्थिक और पर्यायार्थिक दोनों दृष्टियाँ अलग-अलग होती हैं तो एकांतवाद होता है। द्रव्यार्थिक और पर्यायार्थिक दोनों दृष्टियाँ सापेक्ष होती हैं, संयुक्त होती हैं तो अनेकांतवाद प्रस्तुत हो जाता है। दोनों दृष्टियों का अलग-अलग होना मिथ्या दर्शन है ओर दोनों दृष्टियों का संयुक्त होना सम्यक् दर्शन है। इसका अर्थ है कि अनेकांत और सम्यक् दर्शन दोनों पर्यायवाची हैं।

अनेकांत के निष्कर्ष :

जैन दर्शन ने द्रव्य और पर्याय की व्याख्या अनेकांत के आधार पर की। इसलिए जैन दर्शन न द्रव्यवादी है और न पर्यायवादी। यह द्रव्य को भी स्वीकार करता है और पर्याय को भी स्वीकार करता है। इसी आधार पर जैन दर्शन के संदर्भ में कहा गया है कि यह न नित्यवादी है और अनित्यवादी किंतु नित्यानित्यवादी है। यह न सामान्यवादी है और न विशेषवादी किंतु सामान्य-विशेषवादी है। न एकवादी है और न अनेकवादी किंतु एकानेकवादी है। न अस्तिवादी है और न नास्तिवादी किंतु अस्तिनास्तिवादी है। ये सारे निष्कर्ष अनेकांत के आधार पर फलित हुए हैं।

अनेकांत दृष्टि अनेकता में एकता और एकता में अनेकता को लेकर चलती है। यह सब वादों और विवादों को सुलझा देती है। यह सब कदाग्रहों और हठाग्रहों को दूर हटा देती है। यह वह संजीवनी है जो अभियान और कदाग्रह की व्याधियों को नष्ट कर देती है। यह वह अमृत है जो एकांत के विष को निष्प्रभावी कर देता है। दृढ़ अनेकांत दृष्टि को न केवल शास्त्रों तक सीमित रखना चाहिए अपितु जीवन व्यवहार में उतारना चाहिए। यदि

जीवन व्यवहार में अनेकांत दृष्टि आ जाती है तो सर्वत्र शांति ही शांति प्रतीत होने लगती है। यदि यह अनेकांत दृष्टि व्यवहार में नहीं आती तो वहाँ क्लेश, विवाद, संघर्ष और अशांति ही मची रहती है।

मूल की खोज :

एक मनुष्य है। प्रश्न होता है - क्या वह मनुष्य ही है? मनुष्य से पहले भी वह कुछ है और उसके बाद भी कुछ है। इस खोज में चलें तो हम द्रव्य तक पहुँचेंगे। यह मूल द्रव्य की खोज आगे की खोज है। सूक्ष्मतम तत्त्व की खोज है। पर्याय की खोज स्थूल तत्त्व की खोज है। सामने दिखने वाले पदार्थ की खोज है। हम केवल पर्याय या परिवर्तन पर अटके न रहें। मूल द्रव्य की खोज में आगे बढ़ते चले जाएँ। इसके सिवाय कोई गंतव्य नहीं है।

समाधान है अनेकांत :

यह अनेकांत का दार्शनिक पक्ष है। हम अनेकांत की जैन परम्परा के संदर्भ में समीक्षा करें। जैन परम्परा में आज अनेक संप्रदाय हैं। उनमें अनेक मतभेद भी हैं। यदि अनेकांत के आधार पर मतभेद का मूल खोजा जाए, भिन्न विचारों की समीक्षा की जाए तो शायद भेद के लिए कितना बचेगा, मैं नहीं कह सकता। हो सकता है कि कुछ भी न बचे। इस दिशा में बहुत कम काम हुआ है। अनेक प्रसंगों में आग्रह बढ़ाने में रस लिया गया, अनेकांत का प्रयोग नहीं किया गया। समाज को विरासत में जो एक महान दर्शन मिला है, जगत् को देखने का एक सम्यक् और व्यापक दृष्टिकोण मिला है। यदि उसका सम्यक् उपयोग किया जाए तो शायद अनेकांतवाद पूरे संसार को एक नया दृष्टिकोण और एक नया दर्शन दे सकता है। अनेकांतवाद का यह दृष्टिकोण अनेक मिथ्या अभिनिवेशों, आग्रहों को मिटाने और एक सामंजस्यतापूर्ण समाज की संरचना करने में बहुत सहयोगी बन सकता है।

भक्ति रस

विवेक : तीसरा नेत्र

- आर.एल. धींग, उदयपुर

विवेक और विनय जीवन के दो पंख हैं,
विवेक हमारी तीसरी आँख है।
विवेक के अभाव में हम भूल करते रहेंगे,
परिणामस्वरूप जीवन में दु:खशूल चुभते रहेंगे।।
पग-पग पर विवेक का साथ होना चाहिए,
विषयों के आकर्षण में विवेक नहीं खोना चाहिए।
जब तक विवेक है हम अनेक में भी एक हैं,
विवेक से श्रेय, प्रेम का अंतर समझ पाते हैं।।
हेय में मन को नहीं उलझाते हैं,
विवेक के अभाव में आत्मशक्ति क्षीण होती है।।
इंद्रियाँ कुमति के अधीन होती हैं,
अविवेक काली अंधियारी रात है,
जहाँ विवेक है वहाँ सुप्रभात है।।
विवेक शून्य का साथ कौन निभाता है,
विवेकशील के चरणों में संसार विनयपूर्वक शीश झुकाता है।
संसार में इने-गिने लोग दिव्यदृष्टि संपन्न होते हैं,
अनेक मन अत्यंत प्रसन्न होते हैं।।
जब विवेक का तीसरा नेत्र खुलता है।
राग-द्वेष का पंक कुछ-कुछ धुलता है।।

आवश्यक साधना है प्रतिक्रमण

- डॉ. दिलीप धींग, बंबोरा

मानवमात्र भूल का पात्र है। भूल को भूल मानकर अपने दोषों की आलोचना के लिए जैन धर्म में प्रतिक्रमण का विधान है। जीवन व्यवहार में यदि कहीं मर्यादा का अतिक्रमण हो जाए तो पुनः मर्यादा में लौट आना प्रतिक्रमण है। जाने-अनजाने में आदमी से भूल हो ही जाती है। भूल होने पर तुरंत माफी मांग लेनी चाहिए। कभी-कभी व्यक्ति को अपनी भूल का पता भी नहीं रहता है। आभास भी नहीं होता है। इसलिए आगम कहते हैं कि भूल हुई हो अथवा नहीं हुई हो तब भी प्रतिदिन प्रतिक्रमण कर लेना चाहिए। यदि प्रतिदिन संभव नहीं हो तो पंद्रह दिन में प्रतिक्रमण कर लेना चाहिए। चौदह या पंद्रह दिवसीय पाक्षिक प्रतिक्रमण को **'पक्खी का प्रतिक्रमण'** कहते हैं। जैन समाज में अनेक साधक पक्खी का प्रतिक्रमण करते हैं। यदि यह भी संभव न हो तो चौमासी प्रतिक्रमण करना चाहिए। यह चातुर्मासिक साधना वर्ष में तीन बार- **आषाढ़ी पूर्णिमा**, **कार्तिक पूर्णिमा** और **फाल्गुनी पूर्णिमा** को की जाती है।

कोई दैनिक, पाक्षिक और चातुर्मासिक प्रतिक्रमण भी न कर सके तो आगम कहते हैं कि हर व्यक्ति को वर्ष में एक बार तो अवश्य ही प्रतिक्रमण कर लेना चाहिए। वार्षिक प्रतिक्रमण का दिन होता है- **संवत्सरी**, जो पर्युषण का अंतिम मुख्य दिन होता है। प्रतिक्रमण जब भी किया जाता है, उसमें आत्म-आलोचना के द्वारा आत्मशुद्धि की साधना की जाती है।

प्रतिक्रमण, एक आवश्यक साधना है। इसलिए प्रतिक्रमण को आवश्यक सूत्र कहा जाता है, जो एक आगम है। आवश्यक छह हैं - **सामायिक**, **तीर्थंकर स्तुति**, **वंदना**, **प्रतिक्रमण**, **कायोत्सर्ग (ध्यान)** और **पच्चक्खाण (प्रत्याख्यान)**। छह आवश्यकों में प्रतिक्रमण आवश्यक सबसे बड़ा होता है। इसमें सर्वाधिक पाठ होते हैं। इसलिए छह आवश्यक की साधना को समुच्चय में **'प्रतिक्रमण'** बोला जाता है। यानी पारंपरिक विधि सहित प्रतिक्रमण करने से छह आवश्यक की महत्वपूर्ण आराधना हो जाती है। हालांकि हर आवश्यक का अपना स्वतंत्र महत्त्व भी होता है।

प्रतिक्रमण करने से पहले मन में समभाव का जागरण, तीर्थंकर भगवान की स्तुति और गुरु वंदना करनी चाहिए। प्रतिक्रमण से ध्यान की भूमिका बन जाती है। इसलिए प्रतिक्रमण के बाद कायोत्सर्ग किया जाता है। उसके बाद पच्चक्खाण किया जाता है। पच्चक्खाण संकल्पशक्ति का द्योतक एवं नियमबद्ध होने का सूत्र है। यह जीवनचर्या को अनुशासित बनाता है।

विधि सहित प्रतिक्रमण में वंदना एवं विभिन्न आसनों से शारीरिक व्यायाम भी हो जाते हैं। पाठ बोलकर प्रतिक्रमण करना एक बौद्धिक व्यायाम है। प्रतिक्रमण में आत्म-आलोचना से, प्रायश्चित्त से मन पवित्र हो जाता है। ध्यान से मन एकाग्र होता है। कायोत्सर्ग से आसक्ति घटती है। तन-मन की स्वस्थता, स्फूर्ति और आत्मशुद्धि

के लिए प्रतिक्रमण आदर्श साधना है।

प्रतिक्रमण का अर्थ है - **रिवर्स यानी पीछे लौटना**। पीछे लौटने का आशय है- **साक्षी भाव से देखना**। इससे मन की गाँठें खुल जाती हैं। प्रतिक्रमण करते-करते जातिस्मरण ज्ञान (पूर्वजन्म के ज्ञान) तक भी पहुँचा जा सकता है। विपरीत मान्यता (मिथ्यात्व), प्रमाद, कषाय, अशुभ योग और अव्रत का प्रतिक्रमण किया जाता है। घर-परिवार, रसोई, पढ़ाई, व्यापार, बाजार आदि सभी क्षेत्रों में प्रतिक्रमण जरूरी है। लेखा-पुस्तकों का अंकेक्षण (ऑडिट) आर्थिक प्रतिक्रमण है। प्रतिक्रमण सुधार करता है, मर्यादा की रेखा खींचता है और अनुशासन कायम रखता है।

प्रतिक्रमण में दोषों की आलोचना के लिए **मिच्छा मि दुक्कडं** बोला जाता है। प्राकृत भाषा के इस शब्द का अर्थ है- मेरी गलती निष्फल हो। आपस में क्षमायाचना हेतु मिच्छा मि दुक्कडं का प्रयोग बहुत लोकप्रिय है। भारत के प्रधानमंत्री नरेन्द्र मोदी भी लोकसभा में **'मिच्छा मि दुक्कडं'** बोलकर क्षमाभावना व्यक्त कर चुके हैं।

जैन समाज में प्रतिक्रमण कंठस्थ करने की अनोखी परंपरा है। कंठस्थीकरण भी ज्ञानार्जन की एक सर्वप्रचलित विधि है। कंठस्थ पाठ बोलकर, सुनकर अथवा सुनाकर लगभग एक घंटे तक सविधि प्रतिक्रमण करना अपने आपमें एक आदर्श साधना है। इसमें साधक के अभ्यास, स्मरणशक्ति और एकाग्रता का परिचय मिलता है।

प्रतिक्रमण याद करना यानी प्राकृत भाषा का एक आगम कंठस्थ करना। इससे सभी आगमों के नाम याद हो जाते हैं। अर्थ समझकर प्रतिक्रमण याद करना अच्छा है। जिसे प्रतिक्रमण याद है, वह पंच परमेष्ठी का स्वरूप, छह आवश्यक और अठारह पाप जान सकता है। श्रावक के बारह व्रतों (5 अणुव्रत, 3 गुणव्रत और 4 शिक्षाव्रत) का जानकार हो जाता है। उसे मंगलपाठ और पच्चक्खाण का पाठ याद हो जाता है। बचपन में याद किया गया प्रतिक्रमण जीवनभर की पूँजी बन जाता है। प्रतिक्रमण के पाठों में ज्ञान, ध्यान, विनय, अनुशासन, नैतिकता और मैत्री की शिक्षा है। प्रतिक्रमण जानने वाला अच्छा वक्ता भी बन सकता है।

प्रतिक्रमण से जीवन में नई रोशनी पैदा होती है। प्रतिक्रमण की आराधना से अनेक अशुभ टल जाते हैं। गिले-शिकवे मिट जाते हैं। अपनी और दूसरों की भूलों को भूलकर आगे बढ़ने से जीवन का मार्ग आसान हो जाता है। प्रतिक्रमण से व्यक्तिगत, पारिवारिक और सामाजिक, सभी स्तरों पर लाभ ही लाभ है। अतः श्रद्धा-भक्ति के साथ **'प्रतिक्रमण'** की आराधना करनी चाहिए।

प्रश्नोत्तरी का परिणाम

श्रमणोपासक के **अगस्त 2024** धार्मिक अंक में प्रकाशित **'ज्ञान का खजाना इसी में है पाना'** प्रश्नोत्तरी के विजेता

1. विजयाश्री मारू, उदयपुर
2. रीटा जी जैन, मंदसौर
3. शांतिलाल जी मूथा, ब्यावर
4. सीमा जी सेठिया, हुगली
5. चिराग जी जैन, बड़ी सादड़ी

श्रमणोपासक के **अगस्त 2024** धार्मिक अंक में प्रकाशित **'ज्ञान से खिलता जीवन'** प्रश्नोत्तरी के विजेता

1. पूर्वी जी जैन, बड़ोदरा
2. प्रज्ञा जी खाबिया, चित्तौड़गढ़
3. मयंक जी समदड़िया, नासिक
4. राजनंदिनी जी मेहता, जयपुर
5. प्रियांश जी डागा, प्रतापगढ़

श्रमणोपासक के **सितंबर 2024** धार्मिक अंक में प्रकाशित **'ज्ञान से खिलता जीवन'** प्रश्नोत्तरी के विजेता

1. पीहू जी जैन, कोयंबटूर
2. जीयांश जी कटारिया, रतलाम
3. अपूर्वा जी जैन, नीमच
4. शनाया जी जैन, ब्यावर
5. मितांश जी जैन, भीलवाड़ा

संस्कार सौरभ

महत्तम आनंदानुभूति

- सुरेश बोरदिया, मुंबई

आनंद यानी हर्ष या खुशी। किसी अभीष्ट या इच्छित वस्तु, लक्ष्य प्राप्त हो जाने पर मन में होने वाली अनुभूति ही आनंद, हर्ष या खुशी कही जाती है। आनंद कई प्रकार के कहे जा सकते हैं, लेकिन मुख्यतौर पर आनंद के दो प्रकार माने जा सकते हैं - बाह्य आनंद और आंतरिक आनंद। बाह्य आनंद के लिए भौतिक साधनों, संसाधनों की आवश्यकता रहती है। इनके संयोग से प्राप्त होने वाला आनंद बाह्य आनंद ही होगा, जो शरीर को रुचिकर होगा, इंद्रियों को रुचिकर होगा और वह आनंद शरीर एवं इंद्रियों को ही आनंदित करता है, आत्मा को नहीं।

दूसरा आनंद होता है आंतरिक आनंद, जिसके लिए साधनों की नहीं अपितु साधना की आवश्यकता होती है। साधना से मिलने वाला आनंद आंतरिक आनंद होता है, जो हमारी आत्मा को आनंदित करता है।

आनंद में भावों का बड़ा महत्व है। एक जीव किसी दूसरे जीव को कष्ट देकर या मारकर आनंदित होता है तो कोई जीव दूसरे जीव को बचाकर या उसे साता पहुँचाकर आनंदित होता है। दोनों ही जीव अपने-अपने तरीके से आनंद का अनुभव करते हैं, लेकिन उनके भावों में बड़ा अंतर है। किसी को सताकर प्राप्त होने वाला आनंद वास्तविक आनंद नहीं होता बल्कि दूसरों को साता पहुँचाकर प्राप्त होने वाला आनंद ही वास्तविक आनंद होता है।

कहा गया है - *'परहित सरस धरम नहीं भाई, पर पीड़ा सम नहीं अधमाई'* अर्थात् दूसरों का भला करने के समान कोई धर्म नहीं और पीड़ा पहुँचाने के समान कोई अधर्म नहीं। सुबुक्तगीन बादशाह जंगल में से गुजर रहा था। उसे हिरण का एक बच्चा दिखाई दिया और उसने बड़ी आसानी से उस बच्चे को पकड़कर अपने डेरे पर लाकर बाँध दिया। हिरण के बच्चे को पकड़कर सुबुक्तगीन बड़ा आनंदित हो रहा था और जल्दी ही उसे मारकर पकाने की तैयारी करने लगा। छुरी की धार को तीक्ष्ण कर हिरण के उस बच्चे को मारने के लिए जैसे ही वह पीछे मुड़ा कि देखता रह गया। उस बच्चे की माँ

हिरणी स्वयं वहाँ आ पहुँची और अपने बच्चे को बड़े प्यार एवं भय मिश्रित नजरों से अपलक देख रही थी।

संवेदनाओं के प्रभाव ने सुबुक्तगीन को झकझोर कर रख दिया। वह स्वयं हिरणी और उसके बच्चे को अपलक देखने लगा। हिरणी की नजर में अपने बच्चे के लिए जो प्यार, मातृत्व झलक रहा था उसी के बीच सन्निकट खड़ी मौत का भय भी दिखाई दे रहा था, लेकिन हिरणी? वह तो बस अपने बच्चे को निहारने में ही खोई हुई थी। सुबुक्तगीन के हाथों में छुरी को देखकर भी हिरणी अपनी मौत के भय से विचलित नहीं हुई। वह तो बस अपने वात्सल्य को ही प्रवर्द्धित कर रही थी।

सुबुक्तगीन वात्सल्य और भय के इस जीवंत दृश्य को एकटक देखता रहा। सहसा मन में विचारों का प्रवाह आया और चौंक उठा। मन ही मन कहने लगा - ओह! मैं क्या करने जा रहा था? अपना पेट भरने के लिए एक माता की ममता की हत्या करने वाला था! एक समय के भोजन के लिए एक माता की संतान का वध? मेरा पेट तो दाल-रोटी से भी भर सकता है। अतः यह बच्चा मेरे लिए तो सिर्फ दाल-रोटी के बराबर ही है, लेकिन अपनी माता के लिए? अपनी माता के लिए तो यह बच्चा उसका जीवन है अर्थात् सब कुछ है। तभी तो यह माता हिरणी अपनी मौत की भी परवाह न करके अपने बच्चे के पास चली आई।

सुबुक्तगीन के विचारों मे परिवर्तन आता गया और भक्षक अब रक्षक बनने की तरफ बढ़ने लगा। उसने अपने हाथ से छुरी फेंक दी और बच्चे को बंधनमुक्त कर दिया। जैसे ही बच्चा बंधनमुक्त हुआ, वह झपटकर अपनी माँ के पास पहुँच गया और हिरणी उसे बड़े ही प्यार से सहलाने लगी।

अब भयमुक्त हिरणी कृतज्ञ भावों से सुबुक्तगीन की तरफ देखने लगी और सुबुक्तगीन भी हिरणी एवं बच्चे को ही देखे जा रहा था। उसके मन में बड़ा आनंद व्याप्त हो गया। बच्चे को पकड़कर उसे जितना आनंद मिला था, उससे कई गुना आनंद उस बच्चे को मुक्त करके मिल रहा था और हिरणी व बच्चे के आनंद का तो कोई पार ही नहीं था। दोनों ने एक बार पुनः सुबुक्तगीन की तरफ कृतज्ञ भाव से देखा और कुलाँचे भरते हुए जंगल में चले गए।

सुबुक्तगीन बच्चे को पकड़कर भी आनंदित हुआ और फिर उसे स्वतंत्र करके भी आनंदित हुआ, लेकिन दोनों आनंद में बहुत भिन्नता थी। पहले वाला आनंद दूसरों को दुःखी करने वाला था। वह आनंद सिर्फ स्वयं के लिए था। जबकि दूसरे वाले आनंद में दूसरों को दुःखमुक्त करने के भाव थे। वह आनंद सिर्फ स्वयं के लिए नहीं, अपितु दूसरों के लिए भी था। यह आनंद वास्तविक आनंद था। हम भी ऐसे आनंद के लिए प्रयास करें जो सिर्फ हमें ही नहीं, दूसरों को भी आनंदित कर सके। कहा भी गया है - **'सुख दिया सुख होत है, दुःख दिया दुःख होत।'**

दूसरों को सुख देने का कार्य हमें भी सुख दे सकता है। दूसरों को सुख देकर हम स्वयं सुखी बन सकते हैं। दूसरों को दुःख देकर हम अगर आनंद की अनुभूति करना चाहते हैं तो वह आनंद वास्तविक आनंद न होकर हमारे लिए आफत बन सकता है।

नागश्री द्वारा बनाया गया शाक गलती से जहरीला बन गया। घर में किसी को पता न चले इसलिए नागश्री उस शाक को ठिकाने लगाने का सोच ही रही थी कि इतने में धर्मरुचि अणगार गोचरी हेतु पधारे। नागश्री ने वह सारा शाक उनको बहरा दिया और प्रसन्न हुई कि जहरीले शाक

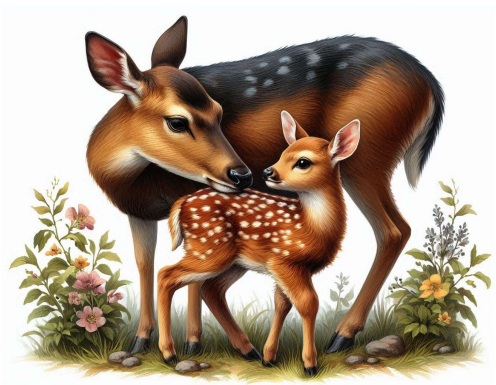

और घर में हास्य का पात्र बनने से छुटकारा मिल गया।

उस जहरीले शाक की कुछ बूंदे जमीन पर गिर जाने पर कई चींटियाँ उसे खाकर मृत्यु को प्राप्त हुई। यह दृश्य देखकर मुनि श्री धर्मरुचि अणगार ने सोचा कि अगर यह सारा आहार मैं परठ दूंगा तो न जाने कितने जीवों की घात होगी और अगर मैं स्वयं ग्रहण कर लूँ तो? कई जीवों को अकाल मृत्यु से बचाया जा सकता है। मुनिश्री ने वही किया और सारा जहरीला शाक स्वयं ग्रहण कर लिया। विष के प्रभाव से मुनिश्री को अपार वेदना हुई। उन्होंने समभाव और समाधिपूर्वक उस वेदना को सहन किया और अपना आयुष्य पूर्ण करके सर्वार्थ सिद्ध-अनुत्तर विमान में देव बने।

इधर नागश्री ने जहरीला शाक बहराकर भयंकर कर्मों का बंध कर लिया और आयुष्य पूर्ण कर छठी नरक में उत्पन्न हुई, जहाँ उसे घोर कष्ट सहना पड़ा। आहार बहराकर छठी नरक में जाना पड़ा? यह मन के भावों का प्रभाव था। आहार बहराने के भाव नहीं थे बल्कि जहरीले आहार से छुटकारा पाने के भाव थे और ऐसा करके आनंदित हो गई। दूसरों को दुःखी बनाने, कष्ट देने जैसे भावों के साथ आनंदित होना दुर्गति का कारण बना।

मुनि धर्मरुचि अणगार ने कीड़े-मकोड़े जैसे छोटे जीवों का भी भला सोचा और उनकी रक्षा के लिए स्वयं के जीवन की भी परवाह नहीं की। उनकी जीवन रक्षा के लिए अपने जीवन, अपने सुख की परवाह नहीं की और जहरीला शाक स्वयं ग्रहण करके भी उसमें आनंद की अनुभूति की। शरीर में तीव्र वेदना का अनुभव हो रहा था, लेकिन मन के भावों में दूसरे जीवों को बचाने का अपूर्व आनंद हिलोरे मार रहा था।

कितना अंतर था नागश्री और धर्मरुचि अणगार के आनंद में! उसी आनंद में मन के भावों के फलस्वरूप नागश्री छठी नरक में गई और धर्मरुचि अणगार सर्वार्थ-सिद्ध विमान में गए।

किसी को दुःखी करके हम आनंद मनाने के बजाय किसी को सुखी बनाने का प्रयास करें तो वह आनंद हमारे लिए सिर्फ आनंद ही नहीं परमानंद, महत्तम आनंद होगा। महत्तम आंनद जैसा अवसर हमारे लिए **'महत्तम महोत्सव - शिखर महोत्सव'** के रूप में उपस्थित हुआ है। आचार्य भगवन् के संयमी जीवन के पचासवें वर्ष जैसा आनंददायक सुअवसर हमारे लिए वास्तव में महत्तम आनंद के रूप में प्रवाहमान है। आचार्य भगवन् एवं सभी चारित्रात्माएँ छहकाय के जीवों की रक्षा के लिए कितने यतनाशील रहते हैं। यह हम सब प्रत्यक्ष अनुभव करते ही आए हैं। उनका जीवन चरित्र हमारे लिए प्रेरणास्पद है, अनुकरणीय है। उनके ऐसे जीवन से प्रेरणा लेकर हम भी आनंद, परमानंद एवं महत्तम आनंद को प्राप्त करने का प्रयास करें, यही शुभ मंगलकामना है।

वीर अनेक प्रकार के होते हैं। कुछ देने वाला दानवीर हो गया, युद्ध में शौर्य दिखाने वाला रणवीर हो गया। आप जानते हैं कि वासुदेव अपने आप में रणवीर होते हैं। जितने युद्ध वासुदेव को करने होते हैं उतने चक्रवर्ती को भी नहीं करने पड़ते हैं, यद्यपि चक्रवर्ती में वासुदेव से भी अधिक बल होता है, तथापि युद्ध वासुदेव को ज्यादा करने पड़ते हैं। भगवान ने इन वीरों की प्रशंसा नहीं की है। भगवान अपने समवसरण में रहने वालों से कह रहे हैं - जो धर्मवीर हैं, वे प्रशंसित हैं। व्यक्ति धर्मवीर कब बनता है? जब वह मोह को जीत लेता है। मोह को जीतने वाले संत होते हैं, इसलिए धर्मवीर के रूप में साधुओं को स्वीकार किया गया है। श्रावक भी इस श्रेणी में आ सकते हैं, किंतु वे पूर्णतया धर्मवीर नहीं हो सकते।

- परम पूज्य आचार्य प्रवर 1008 श्री रामलाल जी म.सा.

महत्तम महोत्सव

हमारा भारत देश **'अनेकता में एकता'** एवं **'वसुधैव कुटुम्बकम्'** आदि अनेक उपमाओं से सुशोभित है और इसका कारण हमारी संस्कृति है। प्रायः हर एक देश में सुअवसरों एवं त्योहारों को अपने-अपने तरीके से मनाया जाता है, परंतु भारत में त्योहारों के साथ कई ऐसे अवसर आते हैं जिन्हें भव्यातिभव्य रूप से मनाया जाता है। इसी भव्य स्वरूप को महोत्सव कहा जाता है। किसी भी महोत्सव को मनाने के दो ही तरीके हैं -

भौतिक रूप से

↓

साज-सजावट
पकवान
रंग-बिरंगे कपड़े इत्यादि

आधुनिकता की दौड़ में भागना

महोत्सव के मर्म को भुला देना

जाने-अनजाने में कर्म बंधन

आध्यात्मिक रूप से

↓

ज्ञान-ध्यान सीखना
आत्मकल्याण हेतु चिंतन-मनन
विभिन्न त्याग-प्रत्याख्यान

संस्कार व संयम की ओर अग्रसर होना

आत्मा के कल्याण हेतु पुरुषार्थ

कर्मों की निर्जरा

वर्तमान में क्या कोई ऐसा महोत्सव गतिमान है?

महत्तम महोत्सव

प्रश्न 1. 'महत्तम महोत्सव' क्या है?

उत्तर परम पूज्य आचार्य प्रवर 1008 श्री रामलाल जी म.सा. के संयमी जीवन के 50 वर्ष पूर्ण होने पर मनाया जा रहा आध्यात्मिक आयोजन **'महत्तम महोत्सव'** है।

प्रश्न 2. यह महोत्सव कब शुरू हुआ व कब तक चलेगा?

उत्तर यह महोत्सव 22 जुलाई 2022 से शुरू हुआ और 9 फरवरी 2025 तक चलेगा।

प्रश्न 3. यह महोत्सव कैसे मनाया रहा है?

उत्तर यह महोत्सव पूर्णतया आध्यात्मिक रूप से मनाया जा रहा है, जिसमें तप-त्याग, ज्ञान-ध्यान, स्वाध्याय आदि गतिविधियाँ होंगी, जिससे आचार्य भगवन् की तरह कई पुण्यशाली आत्माएँ संयमी जीवन की ओर अग्रसर हो जाएँ।

ज्ञानार्जन

स्वाध्याय

तप-त्याग

व्रत विवेक

संस्कार

सामाजिक

संघ विस्तार एवं सशक्तिकरण

जन-जन में राम

गुदड़ी के लाल

प्रश्न 4. इस महोत्सव की गतिविधियों के कितने भाग हैं और इससे कैसे जुड़ा जा सकता है?

उत्तर इस महोत्सव में होने वाली गतिविधियों को नौ प्रकल्पों में विभाजित किया गया है। आप रुचि के अनुसार किसी भी प्रकल्प के माध्यम से महत्तम महोत्सव से जुड़ सकते हैं।

प्रश्न 5. क्या इस महोत्सव में हिस्सा लेने के लिए बहुत विलंब हो गया है?

उत्तर नहीं, बिलकुल भी विलंब नहीं हुआ है। आप अभी भी गतिमान कई प्रकल्पों से जुड़ सकते हैं, जिनकी जानकारी दिए गए इस QR Code में है।

प्रश्न 6. क्या इस महोत्सव में श्री अ.भा. साधुमार्गी जैन संघ के श्रावक-श्राविकाएँ ही भाग ले सकते हैं?

उत्तर आचार्य भगवन् का चिंतन सदैव ही **'सर्वजन हिताय'** का रहता है। अतः सकल जैन समाज इन गतिविधियों से जुड़ सकता है और आत्मकल्याण के अपूर्व अवसर का लाभ ले सकता है।

प्रश्न 7. क्या ऐसी कोई गतिविधि या प्रकल्प हैं जो सकल जैन समाज हेतु बनाए गए हों?

उत्तर सामान्यतः सारी गतिविधियाँ सकल जैन समाज के अनुरूप ही हैं। इसी क्रम में **'अभिरामम्'** पुस्तक की गतिविधियाँ भी सकल जैन समाज हेतु ही हैं।

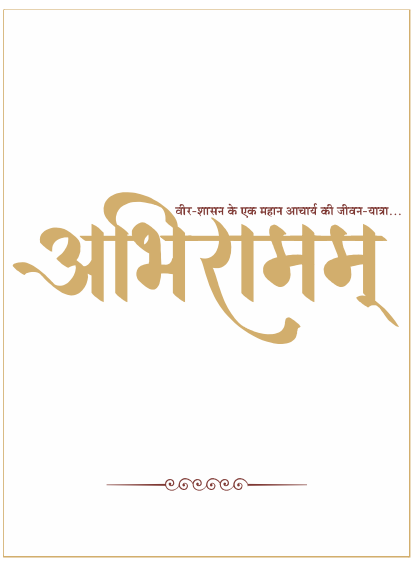

प्रश्न 8. 'अभिरामम्' पुस्तक में क्या है?

उत्तर परम पूज्य आचार्य प्रवर 1008 श्री रामलाल जी म.सा. के संयमी जीवन की यात्रा का चित्रण है **'अभिरामम्'** साथ ही आचार्य प्रवर ने जन-जन के हित को ध्यान में रखते हुए कुछ आयाम प्रदान किए हैं, जिन पर चलने से एक स्वस्थ समाज की स्थापना संभव है।

प्रश्न 9. हमें 'अभिरामम्' पुस्तक क्यों पढ़नी चाहिए?

उत्तर हमारे जीवन में कई ऐसी परिस्थितियाँ आती हैं जब हम विभाव में चले जाते हैं। **'अभिरामम्'** पुस्तक पढ़ने से पुनः अपने स्वभाव में कैसे आएँ और उस पर कैसे स्थिर रहें इसका समाधान प्राप्त होता है। इसी के साथ भगवान महावीर, अक्षुण्ण रूप महान आचार्य श्री रामेश का जीवन चित्रण से साक्षात् होने का अवसर मिजला है, जिसे पढ़ने से हमें जीवन परिवर्तनकारी शिक्षाएँ एवं उत्कृष्ट जीवन निर्माण हेतु मार्गदर्शन प्राप्त होगा।

गणमान्य सुधी पाठकगण!

यदि आप अभी तक भी **'महत्तम महोत्सव'** व **'अभिरामम्'** से नहीं जुड़े हैं या आपकी जानकारी में कोई ऐसा व्यक्ति हो जो अभी भी इस सौभाग्य से वंचित है तो शीघ्र ही दिए गए लिंक पर रजिस्ट्रेशन कराएँ और घर बैठे पठन सामग्री प्राप्त करें। यह महोत्सव आत्मकल्याण, त्याग-तप के प्रसंग के रूप में उपस्थित हुआ है। आप व आपके माध्यम से यदि कुछ व्यक्ति **'महत्तम महोत्सव'** व **'अभिरामम्'** से जुड़ते हैं तो स्व-कल्याण के साथ-साथ हम एक ऐसे महान आचार्य को भेंट अर्पित करने का मौका प्राप्त कर सकते हैं जो ज्ञान व क्रिया के बेजोड़ संगम हैं।

-टीम श्रमणोपासक

भक्ति रस

आत्म-जागृति

- राखी अलिझाड़, मुक्ताईनगर

क्या अपना, क्या पराया, सबका कल्याण करते चले,
धर्म, सादगी, विनय, संस्कारों से जीवन की ज्योत जले।
अंतरात्मा को ही परमात्मा अब बनाना है,
अब सही अर्थ में अंतरात्मा को जगाना है।।
कदम-कदम बढ़े तो मंजिल जरूर मिल जाती है,
छोटे-छोटे त्यागों से ही जीवन बगिया खिल जाती है।
आत्मसंतोष, शांति, तप से क्रोध, मोह, माया को हटाना है,
अब सही अर्थ में अंतरात्मा को जगाना है।।
क्यों उलझे हम मोह-माया के झूठे फंदों में,
क्यों बाँधे कर्म उलटे-सीधे इन धँधों में।
अब जीवन जीने की सही कला को अपनाना है,
अब सही अर्थ में अंतरात्मा को जगाना है।।
सेवा-सुश्रूषा कर सबकी चलना है धर्म की राह,
मन में हो आत्म-समाधान, न हो नाम की चाह।
परिवार, समाज सबका कल्याण करते जाना है
अब सही अर्थ में अंतरात्मा को जगाना है।।

गुरु महिमा

- प्रीति पितलिया, हैदराबाद

गुरुदेव का ध्यान प्रथम, गुरु है प्रभु समान।
बैठ गुरु के चरणों में, मिलता हमको ज्ञान।।

1. गुरुचरणों में शीश नवाएँ,
पुण्य भाग्यशाली बन जाएँ।
2. एक नजर देहरी पर आएँ,
गुरुवर को फिर घर पर पाएँ।।
3. निर्मल निर्झर पाक गुरुवर,
शीश चमकता तेज दिवाकर।
4. ऐसी कर तू प्रभु से विनती,
मोह की हो फिर उलटी गिनती।।
5. दुख हारे मन में सुख आए,
सदा जीवन में पुण्य कमाए।
6. बिन श्रद्धा के अधूरा कीर्तन,
मोह में जिसके भटक रहा मन।।
7. गुरु तेरी वाणी है निराली,
भर दे भक्त में ज्ञान की लाली।
8. निर्मल मन से स्वयं को खोजा,
मैं फिर अपने मंदिर पहुँचा।।
9. पार करे संकट की सीढ़ी,
उस पर चलती कल की पीढ़ी।
10. बगुलाभगत का तप है झूठा,
श्रद्धा से जिसका मन छूटा।।
11. गुरु शरण में जीवन अर्पण,
मन हो जैसे उजला दर्पण।
12 संकट टाले दुख को हारे,
गुरु सबके जीवन को सँवारे।।
13. गुरु समाए हर कण-कण में,
जपते रहें हम हर क्षण-क्षण में।
14. मुख से जिनके बहे जिनवाणी,
ऐसे रगों में बसे गुरुवाणी।।
15. गुरुवर सदा मेरे साथ रहें,
सिर पर उनका हाथ रहे।
16. सुंदरता को मन से जाना,
मोह, देह से रहे अनजाना।।
17. संयम अहिंसा जैन धर्म है,
जैन धर्म का यही मर्म है।
18. सेवा मात-पिता की कर लो,
पुण्य कर्म से झोली भर लो।।
19. जो भी पूजे गुरु को पहले,
आरंभ दिन का होता अहले।
20. सब कर्मों का खेल नियारा,
धर्म बिना जीवन है कोरा।।
21. इच्छा है हर दुःख का कारण,
गुरु चरणन में होत निवारण।
22. विशाल ज्ञान का हैं ये सागर,
तर जाते हैं मानव आकर।।
23. कल-कल करती बहती धारा,
जीओ और जीने दो का है नारा।
24. आलस भागे तब होवे सवेरा,
स्वप्न में आए गुरु का चेहरा।।
25. दया प्रेम को जो अपनाता,
निश्चल रूप से मन को भाता।
26. जन्मे जैन कुल में बड़भागी,
तब मानुस की किस्मत जागी।।

27. जैन धर्म में मिला है अवसर,
कृपा हुई है गुरु की हम पर।
28. स्वप्न जो हमने देखे कल तक,
गुरु स्वयं आए हैं घर तक।।
29. तन-मन में गुरु को हैं समाए,
अंतर्मन की ज्योत जगाए।
30. जय जय जय महावीर की बोलें,
पाप बहती गंगा में हम धो लें।।
31. पहले कर तू गुरु की भक्ति,
इससे बढ़ेगी आतमशक्ति।
32. विनय-विवेक का पाठ पढ़ाए,
साहस हर मुश्किल हर जाए।।
33. गरम सरद देह में समाए,
कर्म कटे जब मन मुस्काए।
34. जिनशासन का चम-चम तारा,
जिनवाणी की बहती धारा।।
35. धीरज धैर्य हृदय में समाए,
मोक्ष के पथ पर कदम बढ़ाए।
36. गुरु कृपा फल को दर्शावे,
छाया उनकी प्रेम बरसावे।।
37. ध्यान साधना से पुलकित मन,
चंदन-सा महके है तन-मन।
38. अवसर आया आज सुनहरा,
दर्शन को तरसे मन मेरा।।
39. आओ सब मिल ध्यान लगाएँ,
गुरुभक्ति में हम खो जाएँ।
40. अर्थ जानो मानव जीवन का,
मत फेरो तुम मनका कर-का।।

गुरु भक्ति में लीन हो, यह सारा संसार।
गुरुवर की महिमा कृपा है, अनंत अपरंपार।।
ध्यान गुरु का करेगा, भवसागर से पार।
'प्रीत' तेरे जीवन का, तब होगा उद्धार।।
हम सबके जीवन का, तब होगा उद्धार।।
आदर्श गुरु मिल जाए अगर, जीवन शुरु।
गुरुचरणों में शत्-शत् नमन, वंदन।।

आत्मा का दमन तथा शमन शोधन की प्रक्रिया है, पर आज हम कितना शोधन कर पाते हैं, यह भी विचार करने की बात हैं। तनावमुक्त होकर जीवन को कैसे सुरक्षित करें? इस दिशा में सतत् प्रयत्न करते रहने की आवश्यकता है। यह कार्य कठिन भी नहीं है। गुरुदेव फरमाते हैं कि- 'करत करत अभ्यास के जड़मति होत सुजान।' तवे पर निरंतर पानी डालते रहो, आग से तपा तवा कभी न कभी तो ठंडा होगा ही, फिर तो तवे पर पानी की बूँदे भी दिखेंगी। कच्चे घड़े में पानी डाला तो वह सोंखेगा, फिर भी निरंतर डालते रहे तो एक क्षण ऐसा आएगा जब पानी उसमें ठहरेगा। पहला पानी नदी भले चूस ले, पर निरंतर वर्षा होती रही तो एक दिन उस नदी में बाढ़ आ जाएगी। खेतों में पानी का धोरा चलाते हैं, पर किसान यदि सोच ले कि इतना पानी तो मिट्टी ही सोंख लेगी तो पेड़ों तक कैसे पहुँचेगा, तो खेती ही नहीं हो पाती। मिट्टी कितना ही पानी सोंख ले फिर भी वह संतोष करता है और फिर वह समय आता है, जब पानी पेड़ों की जड़ तक पहुँच जाता है। प्रभु महावीर ने उपाय बताया, दवा बता दी, उसका प्रयोग करना अपने पर निर्भर है। फॉर्मूला उपलब्ध है, काम में लो तो जीवन भव्य बन जाएगा।

- परम पूज्य आचार्य प्रवर 1008 श्री रामलाल जी म.सा.

स्वाध्याय : छब्बीस नारे

- डॉ. दिलीप धींग, बंबोरा

1. दिनचर्या का इक अध्याय।
घड़ी दो घड़ी हो स्वाध्याय।।

2. शास्त्र-रक्षा का श्रेष्ठ उपाय।
घर-घर में हो नित स्वाध्याय।।

3. सीमित करो टी.वी., अखबार।
स्वाध्याय का करो प्रचार।।

4. सबसे प्यारा, सबसे न्यारा।
स्वाध्याय है मित्र हमारा।।

5. संतों, विद्वानों की राय।
सच्चा साथी है स्वाध्याय।।

6. साधना का श्रेष्ठ उपाय।
सामायिक संग हो स्वाध्याय।।

7. आत्म-गुणों की होती आय।
जय-जय सामायिक-स्वाध्याय।।

8. स्वाध्याय के साथ विनय हो।
मैत्री से परिपूर्ण हृदय हो।।

9. दिन का सूरज, रात का चंद्रमा।
स्वाध्याय की अद्भुत महिमा।।

10. मन तेजस्वी, बुद्धि निर्मल।
स्वाध्याय के सुमधुर फल।।

11. जहाँ स्वाध्याय का दीया जलता।
वहाँ रोशनी ज्ञान सफलता।।

12. स्वाध्याय का तप जो करता।
ज्ञानामृत का घट वह भरता।।

13. सब स्वाध्याय करें करवाएँ।
स्व-पर के संताप मिटाएँ।।

14. स्वाध्याय है जीवन का मंगल गान।
ज्ञान और ज्ञानी का सच्चा सम्मान।।

15. स्वाध्याय शास्त्रों का अमृतपान है।
अल्पज्ञ भी बन जाते विद्वान हैं।।

16. सन्मति-पथ का राही हूँ मैं।
गौरव का स्वाध्यायी हूँ मैं।।

17. कौन है अपना, कौन पराया?
ज्ञानी ने सबको अपनाया।।

18. स्वाध्याय से कष्ट टलेंगे।
सद्विचार के फूल खिलेंगे।।

19. स्वाध्याय की सर्चलाइट लें।
अंधियारी राहों पर चलें।।

20. महक प्रेम की, ज्ञान उजाला।
ऐसा है स्वाध्याय निराला।।

21. स्वाध्याय-पथ है आत्म-जय का।
सर्वोत्तम उपयोग समय का।।

22. ग्रहण-क्षमता, धारण-क्षमता।
स्वाध्याय से बढ़ती समता।।

23. कषायों का जंगल, प्रपंच का दंगल।
स्वाध्याय से चहुँ ओर होता मंगल।।

24. स्वाध्याय के रसिक दीवानों!
खुद को देखो, खुद को जानो।।

25. ज्ञानार्जन और आत्म-जागरण।
स्वाध्याय से श्रेष्ठ आचरण।।

26. स्वाध्याय से जागे ज्योति।
विपुल कर्म-निर्जरा होती।।

भीलवाड़ा चातुर्मास समाचार

धर्म हमें कषाय-क्लेश नहीं सिखाता – आचार्य भगवन्

हमारी आत्मा में अनंत शक्ति है – उपाध्याय प्रवर

आगामी चातुर्मास, दीक्षा प्रसंग, महत्तम शिखर प्रसंग आदि की विनतियों का अपूर्व दौर जारी

श्री इभ्य मुनि जी म.सा. ने इस चातुर्मास में संपन्न कीं 6 अठाइयाँ

भीलवाड़ा में एक माह में 108 अठाई करने का आह्वान

अरिहंत भवन, आर.के. कॉलोनी एव प्रवचन पांडाल, प्राथमिक विद्यालय, धांधोलाई, भीलवाड़ा।

जहाँ रहमत बरसती है, किस्मत संवरती है।
जहाँ होता है सब का बेड़ा पार, वो है राम गुरु दरबार।।

मानवता, नैतिकता, सदाचार का संदेश देने वाले युगनिर्माता, युगपुरुष, साधना के शिखर पुरुष, मानवता के मसीहा, ज्ञान व क्रिया के बेजोड़ संगम, उत्क्रांति प्रदाता, नानेश पट्टधर आचार्य प्रवर 1008 श्री रामलाल जी म.सा., बहुश्रुत, वाचनाचार्य, उपाध्याय प्रवर श्रद्धेय श्री राजेश मुनि जी म.सा. आदि ठाणा-23 एवं शासन दीपिका साध्वी श्री कुसुमकांता जी म.सा. आदि ठाणा-43 के शिखर महोत्सव चातुर्मास में अध्यात्म का अनुपम झरना निरंतर प्रवाहमान है। महापुरुषों की दिव्य साधना एवं प्रवचन से जन-जन प्रभावित हो रहे हैं। थोकड़ों का शतक शिविर, श्रावक के 12 व्रत शिविर, बालक-बालिका संस्कार शिविर, धर्मपाल शिविर, पाठशाला के बच्चों का शिविर, स्वाध्यायी समागम शिविर आदि के माध्यम से अपूर्व ज्ञानचेतना जागृत हो रही है। श्री इभ्य मुनि जी म.सा. ने अपूर्व आत्मबल का परिचय देते हुए 80 साल की उम्र में इस चातुर्मास में 6 अठाई करके जिनशासन का गौरव बढ़ाया है। अन्य अनेक चारित्रात्माओं एवं श्रावक-श्राविकाओं के विभिन्न तपस्याओं का क्रम जारी है। **'लोच में क्या सोच'** कार्यक्रम के तहत अभी तक 260 लोच संपन्न हो चुके हैं। **'राम गुरु का है संदेश, व्यसनमुक्त हो सारा देश'** अभियान के अंतर्गत स्कूलों में व्यसनमुक्ति संस्कार जागरण के कार्यक्रम निरंतर हो रहे हैं।

श्री अखिल भारतवर्षीय साधुमार्गी जैन संघ, महिला समिति एवं समता युवा संघ का राष्ट्रीय अधिवेशन 2 से 4 अक्टूबर को आयोजित किया जाएगा एवं पाँच मुमुक्षु भाई-बहनों की दीक्षा 7 अक्टूबर को संभावित है। सम्पूर्ण

भीलवाड़ा में भरपूर उल्लास एवं धर्म का वातावरण बना हुआ है। श्री साधुमार्गी जैन संघ, महिला मण्डल, समता युवा संघ, बहू मण्डल, बालिका मंडल के सभी सदस्य चातुर्मास को अद्वितीय बनाने हेतु अहर्निश सेवारत हैं।

सार्थक को लेना, निरर्थक को छोड़ना

16 सितंबर 2024। भोर के आगाज के साथ ही प्रात:कालीन मंगलमय प्रार्थना में *'मेरे प्यारे देव गुरुवर, श्री जिनधर्म महान'* की मधुर स्वर लहरी से सम्पूर्ण माहौल भक्तिमय बन गया। आचार्य भगवन् ने आशीर्वाद स्वरूप मंगलपाठ फरमाया।

प्रवचन स्थल पर आयोजित विशाल धर्मसभा को संबोधित करते हुए बहुश्रुत, वाचनाचार्य, उपाध्याय प्रवर श्रद्धेय श्री राजेश मुनि जी म.सा. ने अपनी ओजस्वी वाणी में फरमाया कि **''गुरु समाधान प्रदाता होते हैं। गुरुदेव फरमाते हैं कि समाधान दिया नहीं जाता लिया जाता है। हमें कैसा समाधान चाहिए? हम ऐसा समाधान चाहते हैं जो हमारे मन के अनुकूल हो, वही समाधान हमें प्रिय है। जिसमें यह कहा जाए कि तुम सही हो, हमें गलत बताकर दूसरे को सही बता दिया जाए तो वह समाधान गले नहीं उतरता। समाधान समाधि क्या है? क्या सोचने-बोलने से समाधि मिल सकती है? सम्पूर्ण समाधान का सार सत्य की खोज, सूक्ष्म तत्त्वों की खोज में है। कंफ्यूजन रहेगा तब तक समाधान नहीं मिल पाएगा। क्या करें, क्या नहीं करें? क्या सही, क्या गलत? किसे स्वीकार करें, किसे त्यागें? किसे पकड़ें, किसे छोड़ें? हमें क्या जानना है, क्या नहीं जानना है? जिसके मस्तिष्क की सोच परिष्कृत है, निर्मल है, वह सत्य को पकड़ लेगा और बाकी को छोड़ सार-सार को ग्रहण कर लेगा। आगमकार कहते हैं कि सार्थक को अंदर आने दो और निरर्थक को बाहर जाने दो। परमार्थ का सेवन करने वालों से परिचय करना। जहाँ निर्णय क्षमता है वहाँ समाधान है। जहाँ अनिर्णय है, वहाँ असमाधान है। आप देखें, आपका दिमाग निर्णायक है या अनिर्णायक है? तीर्थंकर देवों की वाणी में समाधान और समाधि है। सार-सार को ग्रहण करके जीवन को सही दिशा में ले जाएँ।''**

श्री राजन मुनि जी म.सा. ने फरमाया कि श्रेष्ठ कार्यों को कल पर कभी नहीं छोड़ना चाहिए। आज ही आत्मा को जगाना है और संयम पथ पर आगे बढ़ जाना है।

महत्तम दैनिक उपासना के अंतर्गत 9 नवकार, 9 लोगस्स, 9 णमोत्थु णं के साथ 9 बार गुरु वंदना करने का नियम कई भाई-बहनों ने लिया। कांकरोली विराजित साध्वी श्री रविप्रभा जी म.सा. के 59 उपवास के उपलक्ष्य में 60 लोगों ने बियासना करने का प्रत्याख्यान लिया।

जहाँ सरलता है, वहाँ सहजता है

17 सितंबर 2024। *'श्री महावीर स्वामी की सदा जय हो'* गीत के साथ प्रात: प्रार्थना के पश्चात् आयोजित विशाल धर्मसभा में उपस्थित अपार जनमेदिनी को शास्त्रों के अमृतकणों से पावन करते हुए परमागम रहस्यज्ञाता परम पूज्य आचार्य प्रवर ने अपनी दिव्यदेशना में फरमाया कि *''अध्यात्म हमारे भीतर रम जाना चाहिए। हमारे कतरे-कतरे में धर्म का अनुराग होना चाहिए। धर्म आत्मा से ही साधा जाता है। अध्यात्म का अर्थ होता है आत्मा में रमण। क्षमा, मृदुलता, सहजता, सरलता, निर्लिप्तता आत्मा के गुण हैं। हम अपनी पहचान कैसे करें? अपने भीतर देख लें कि मेरे भीतर कितनी सरलता है। कई लोगों की आदत होती है कि वे बात को घुमा-फिराकर बोलेंगे। बात को उलझाएँगे। उलझाते वही हैं और सुलझाते भी वही हैं। वे अपना महत्व स्थापित करने के लिए इस प्रकार की बात करते हैं। हमारा मन उलझन*

में नहीं रहेगा तो हमारे भीतर सरलता रहेगी। जहाँ सरलता है वहाँ सहजता आ जाती है। उसकी चर्या सहज रूप में मुक्तिगामी बन जाती है। ऐसी सहजता मोक्ष की ओर अग्रसर करने वाली होती है। हमारी सारी चर्याएँ आत्मभावों से ओत-प्रोत हो जाएँ। भीतर से आत्मध्वनि गूंजे कि मैं आत्मा हूँ। इससे हमारा शरीर के प्रति ममत्व कम होगा।''

श्री राजन मुनि जी म.सा. ने फरमाया कि कुछ पाने के लिए कुछ खोना पड़ता है। बहुत कुछ पाने के लिए बहुत कुछ खोना पड़ता है। सब कुछ पाने के लिए सब कुछ खोना पड़ता है। हमारे मन का हौंसला बुलंद होना चाहिए। परम मंजिल को प्राप्त करने के लिए प्रबल पुरुषार्थ करने की जरूरत है। दीपावली के पावन अवसर पर 108 अठाई के आयोजन में अठाई तप करने का प्रत्याख्यान कई लोगों ने लिया। रतलाम संघ ने आगामी चातुर्मास एवं अन्य प्रसंगों की विनती गुरुचरणों में प्रस्तुत की। सूरत संघ ने विनती के साथ क्षमायाचना के भाव रखे। दुबई से सुनील जी मूथा परिवार ने गुरुदर्शन-सेवा का लाभ लिया। दशवैकालिक सूत्र के प्रथम अध्ययन की पाँच गाथाओं का स्वाध्याय करने एवं कंठस्थ करने का नियम कई भाई-बहनों ने लिया।

'थोकड़ों का शतक' शिविर में साध्वी श्री विरल श्री जी म.सा. ने अनेक छोटे-छोटे बोलों की सुंदर व्याख्या प्रस्तुत की। परम गुरुभक्त संथारा साधक धरमचंद जी देरासरिया, देवगढ़ के महाप्रयाण पर परिजनों ने गुरुचरणों में उपस्थित होकर आध्यात्मिक शांति व संदेश प्राप्त किया।

मौत के छापे से बचा नहीं जा सकता

18 सितंबर 2024। प्रभु एवं गुरुचरणों में समर्पित प्रार्थना में *'राम गुरुवर म्हारा रे'* भक्ति गीत के साथ गुरु आराधना की गई। तत्पश्चात् प्रवचन स्थल पर आयोजित विशाल धर्मसभा के पांडाल में उपस्थित चतुर्विध संघ को आरंभ-समारंभ की सूक्ष्म मीमांसा करते हुए शास्त्रज्ञ परम श्रद्धेय आचार्य भगवन् ने फरमाया कि *''जो भी ग्रहण किया है वह एक दिन छूटेगा ही। जीव दो प्रकार के हैं - आरंभ करने वाले और अनारंभ वाले। आरंभ वालों के बीच में ही अनारंभ जीवी भी रहता है। मगर उसको वैसी रंगत नहीं होती है। वह हृदयस्थ भावों से रहता है। भगवान ने कहा है कि तुम्हारा जीवन संस्कारित है या असंस्कारित? असंस्कारित जीवन को साधा नहीं जा सकता। जीवन की घटना पहले से ही पता चल जाए तो उसको सुधारने में लग जाएँगे, सतर्क हो जाएँगे। सावधानी हटी दुर्घटना घटी। ई.डी., सी.बी.आई., इनकम टैक्स के छापे से बचा जा सकता है, लेकिन मौत के छापे से बचने का कोई उपाय नहीं है। मौत से व्यक्ति जितना सावधान नहीं रहता उससे ज्यादा दूसरे कार्यों से रहता है, जबकि मौत से सावधान रहने की ज्यादा आवश्यकता है। त्याग-प्रत्याख्यान, धर्म-ध्यान में समय ज्यादा लगाएँ। घंटे-घंटे के प्रत्याख्यान लेकर सावधान हो सकते हैं। एक क्षण भी व्यर्थ नहीं करना है। धीरे-धीरे हमारा झुकाव परमात्मा की दिशा में हो जाएगा। हर समय संवर में रहें। आरंभ से विरक्त होना बड़ा ही मुश्किल का काम है। मगर साधु अडिग होता है, अनारंभी होता है। जो मान की चाह करेगा उसे अपमान भी झेलना पड़ेगा। आज कम से कम एक घंटा आरंभ ना करें।''*

श्री राजन मुनि जी म.सा. ने फरमाया कि पूज्य गुरुदेव के प्रति हमारी श्रद्धा हो। सार्थक तत्त्वों को पकड़ते जाएँ और निरर्थक तत्त्वों को छोड़ते जाएँ। मध्यप्रदेश अंचल द्वारा आगामी दीक्षा, महत्तम कार्यक्रम एवं चातुर्मास आदि प्रसंग मध्यप्रदेश अंचल को प्रदान करने की विनती प्रस्तुत की।

शरीर बहने वाला है

19 सितंबर 2024। प्रात: मंगलमय प्रार्थना में *'मेरे प्यारे देव गुरुवर, श्री जिनधर्म महान'* गीत के साथ भाव

अर्पित किए गए। राजकीय प्राथमिक विद्यालय में प्रवचन स्थल पर आयोजित विशाल धर्मसभा को संबोधित करते हुए संयम साधना के सजग प्रहरी आचार्य भगवन् ने अपनी दिव्यवाणी में फरमाया कि *''शरीर को देखो। शरीर के वर्तमान क्षण को देखो। जो इस वर्तमान को देख लेता है, जान लेता है, उसका समीक्षण करता है, उसको लगेगा कि शरीर बहने वाला है। शरीर स्थिर नहीं है। कब ये मृत्यु के मुँह में चला जाएगा इसका कोई भरोसा नहीं है। कभी एक मिनट ध्यान की मुद्रा में बैठकर इस शरीर पर ध्यान करना कि उसमें क्या संवेदना हो रही है। निरंतर इसमें से पुद्गल निकल रहे हैं और पुद्गल उत्पन्न हो रहे हैं। यह प्रक्रिया निरंतर चल रही है किंतु अदृश्य है। महान पुण्यवानी से यह शरीर मिला है। यह शरीर क्षणभंगुर है। क्षण-क्षण ढ़ल रहा है। हर क्षण हर पल इसमें परिवर्तन हो रहा है। यही एक अवसर है जिसमें आत्मकल्याण की साधना साधी जा सकती है। मोक्ष की यात्रा कराने वाला एक मात्र मनुष्य शरीर है। भूतकाल चला गया, भविष्य का पता नहीं है। वर्तमान में जो शरीर मिला है उसका मुझे उपयोग करना चाहिए। हम चिंतन करें कि मेरे जीवन का उद्देश्य क्या है। जो मौका मिला है उसका लाभ उठा लेना चाहिए। आरंभ-परिग्रह के रस से अब हमें दूर होना है।''*

श्री राजन मुनि जी म.सा. ने फरमाया कि धार्मिक कार्यों में निरंतरता बनाए रखें। सामायिक विधिपूर्वक और समझपूर्वक करें। साध्वीवर्याओं ने गुरुभक्ति गीत प्रस्तुत किया। थोकड़ों के शतक शिविर में साध्वी श्री विरल श्री जी म.सा. ने विशेष मार्गदर्शन दिया।

राग-द्वेष कर्म के बीज हैं

20 सितंबर 2024। प्रात: की मंगलमय प्रार्थना के पश्चात् आचार्य भगवन् ने असीम कृपा करके आशीर्वाद स्वरूप मांगलिक पाठ फरमाया। तत्पश्चात् आयोजित धर्मसभा को संबोधित करते हुए श्री राजन मुनि जी म.सा. ने फरमाया कि कुछ भी ऐसा नहीं जो बचाने लायक है। एकमात्र आत्मा को छोड़कर कुछ भी ऐसा नहीं जो रक्षा कर सकता है। आत्मा को छोड़कर राग-द्वेष कर्म के बीज हैं। इनसे जन्म-मरण का चक्र बढ़ता है। यदि दु:ख और अशांति से बचना है तो संवेग-निर्वेद को प्राप्त करो।

श्री धीरज मुनि जी म.सा. ने फरमाया कि जिस कार्य के लिए हमने लक्ष्य बना लिया उस लक्ष्य को प्राप्त करने के लिए शक्ति अपने आप आ जाती है। जो हम सुनते हैं वैसा हमारा आचरण हो जाता है। जैसा बार-बार सुनेंगे वैसा करने के लिए हमें हमारी चेतना प्रेरित करेगी। जिनवचन हमें बार-बार प्रेरणा दे रहे हैं कि सही दिशा एवं सही मार्ग पर चलो। आत्मकल्याण के लिए शरीर के मोह को कम करना होगा। विभिन्न त्याग-प्रत्याख्यान हुए।

प्रमाद मत करो

21 सितंबर 2024। प्रभु एवं गुरुभक्ति से ओत-प्रोत मंगलमय प्रार्थना के पश्चात् आयोजित विशाल धर्मसभा में अपार जनमेदिनी चारित्रात्माओं के अपूर्व संयम के दर्शन कर अभिभूत हो रही थी। इसी मध्य चतुर्विध संघ के समक्ष परम पूज्य आचार्य भगवन् का मंगल प्रवेश प्रवचन पांडाल होते ही संपूर्ण सभा **'पधारज्ये घणी खमा'** के आत्म-उद्घोष से गूँज उठी। परमागम रहस्यज्ञाता आचार्य भगवन् ने अपनी दिव्यदेशना में फरमाया कि *''उठ गए हो अब प्रमाद में नहीं जाना। उठने के बाद भी व्यक्ति शिथिल हो जाता है तो विषय-वासना की तरफ झुकाव हो जाता है। मन को ढ़लते देर नहीं लगती। मन फिसल जाता है और व्यक्ति प्रमाद की ओर चला जाता है। अनादिकाल से ऐसा होता रहा है। व्यक्ति मोह-ममत्व का त्याग कर देता है किंतु प्रमाद में पड़े रहकर मोह कर्म के चंगुल में फँसता चला जाता है। भगवान महावीर का उपदेश है कि जग गए हो, उठ गए हो तो अब पुन: प्रमाद में मत जाओ। भगवान महावीर ने कहा*

है - कर्म से ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र होता है। आज अधिकांश लोग असंतुष्टि में जीते हैं। जिधर भी दृष्टि डालो घर-परिवार में, समाज में कोई भी संतुष्ट नहीं है। व्यापार में आदमी को संतुष्टि नहीं है। पति को पत्नी से, बाप को बेटे से, बेटे को बाप से, सास को बहू से, बहू को सास से संतुष्टि नहीं है। इसका एक कारण है अभाव और दूसरा कारण है स्वभाव। हमारे अंदर अहंकार बस गया तो हमें संतुष्टि नहीं होगी। फिर सारी दुनिया गलत दिखेगी। इसमें यह कमी है, उसमें यह कमी है। जब मेरे भीतर कमी है तो मुझे सारी दुनिया में कमी नजर आएगी। मैं भला हूँ, शांति-समाधि में हूँ तो मुझे दुनिया का हर प्राणी शांति-समाधि में मिलेगा।''

श्री धीरज मुनि जी म.सा. ने फरमाया कि जो समय बीत गया वह वापिस आने वाला नहीं है। अब जो समय बचा है उसका सदुपयोग कर लो। हम जो भी कार्य कर रहे हैं उनका एक ही उद्देश्य होना चाहिए कि हमारे मन की समाधि बढ़े। हड़बड़ी-गड़बड़ी की जननी है। हड़बड़ी असमाधि में ले जाने वाली होती है। साध्वीवर्याओं ने गुरुभक्ति गीत प्रस्तुत किया।

जैसा बीज बोएँगे, वैसा फल मिलेगा

22 सितंबर 2024। आज का मंगमलय अवसर सभी के मनो-मस्तिष्क में बस गया है। आचार्य भगवन् द्वारा प्रदत्त रविवारीय समता शाखा आयाम से अपने आपको धन्य बनाने हेतु आज प्रतिदिन की तुलना में कहीं अधिक उपस्थिति थी। सैंकड़ों गुरुभक्तों ने इस पावन अवसर का लाभ उठाते हुए समता आराधना कर आचार्य भगवन् के आयाम को सार्थक किया।

प्रवचन स्थल पर आयोजित विशाल जनमेदिनी को भगवान महावीर के अमृतवचनों से पावन करते हुए तरुण तपस्वी आचार्य भगवन् ने अपनी दिव्यवाणी में फरमाया कि *''उठो, प्रमाद मत करो। जैसा बीज बोया जाएगा वैसी ही फसल होगी। हम अच्छा या बुरा जैसा कार्य करेंगे उसका परिणाम भी वैसा ही मिलेगा। कंस, दुर्योधन, रावण अनेक उदाहरण भरे पड़े हैं। अहंकार, ईर्ष्या के कारण उनकी दुर्गति हो गई। हे साधक! तुम प्रमाद में मत पड़ो। प्रत्येक मनुष्य की अपनी-अपनी सोच है, अपने-अपने विचार हैं। उसी के परिणामस्वरूप वह सुख-दुःख का भेद करने वाला होता है। हम किसी को ना सुखी बना सकते हैं और ना दुःखी। जिसकी आदत ही विचारों में, क्रोध में घुलने की है वह उन्हीं में घुलता रहेगा। हमारी समझ उसके काम नहीं आएगी। एक की समझ दूसरे के काम नहीं आती। यदि आती तो भगवान सभी को अपने साथ मोक्ष ले जाते। हमारे विचार बदलेंगे तो व्यवहार में परिवर्तन आएगा। महासती श्री कुसुमकांता जी म.सा. ने 7 उपवास की तपस्या की है और आज 8 के प्रत्याख्यान हो चुके हैं। श्री इभ्य मुनि जी म.सा. के 8 के पारणे की संभावना है।''*

श्री धीरज मुनि जी म.सा. ने *'आया कहाँ से कहाँ है जाना'* गीत प्रस्तुत करे हुए फरमाया कि हड़बड़ी में रहना, जरूरत से ज्यादा सामान रखना, बड़ों का दिल दुःखाना असमाधि का कारण है। जो अधिक बोलता है वह दुःखी होता है।

साध्वी श्री सुशक्ति श्री जी म.सा. ने फरमाया कि धर्म और मोक्ष को सदैव आगे रखना, काम व अर्थ को पीछे रखना। आज मानव अर्थ व काम के पीछे दौड़ रहा है। आपको चातुर्मास मिला है तो आप धर्म और मोक्ष को आगे रखें। साध्वी श्री सुनेहा श्री जी म.सा. ने महापुरुषों के आदर्श जीवन से प्रेरणा लेने की बात कही।

श्रद्धा परम दुर्लभ है

23 सितंबर 2024। प्रातः मंगलमय प्रार्थना पश्चात् धर्मसभा को संबोधित करते हुए श्री राजन मुनि जी म.सा. ने अपनी फरमाया कि सम्यक् ज्ञान, दर्शन व चारित्र मोक्ष का मार्ग है। ज्ञान, गंगा के समान; क्रिया, यमुना के समान एवं दर्शन, सरस्वती के समान है। दर्शन एक ऐसा तत्त्व है जो ज्ञान व क्रिया को मैला नहीं होने देता। जैसा बोलते हैं, वैसा

करें। जब तक बोलने व करने में विसंगति रहेगी, तब तक विकास नहीं होगा। मुनि जैसा बोलता है, वैसा करता है। ज्ञान व क्रिया का संगम हो तो मोक्ष की प्राप्ति होती है। हमें इतनी श्रद्धा रखनी है कि भगवान ने जो कहा है, वह सत्य है। श्रद्धा परम दुर्लभ है। हमारी श्रद्धा अंगद के पैर के समान होनी चाहिए। कुछ भी हो जाए, मेरी श्रद्धा डिगनी नहीं चाहिए। कई प्रलोभन हैं, आकर्षण हैं, लेकिन उसके चक्कर में नहीं पड़ना चाहिए। जिसने तीर्थंकर देवों की शहनाई सुन ली, उसे दूसरे ढोल नहीं सुहाते। तीर्थंकर देवों में जिसकी आस्था हो गई, वो कभी नहीं टिकता। अरणक श्रावक की आस्था इतनी मजबूत थी कि उसे देव, दानव तक हिला नहीं सके। ज्ञान व क्रिया कम होगी तो चलेगा, लेकिन श्रद्धा घनीभूत होनी चाहिए।

श्री धीरज मुनि जी म.सा. ने फरमाया कि जिसके भीतर अहिंसा की भावना नहीं होती, वह जीव असमाधि में जाता है। समाधि भाव बढ़ाने के लिए अहिंसा की भावना को बढ़ाएँ, छह काय के जीवों की रक्षा करें। विभिन्न त्याग-प्रत्याख्यान हुए। दोपहर में आगम वाचनी, ज्ञानचर्चा, प्रश्नोत्तरी आदि हुए।

दर्शन, वंदन, पर्युपासना करें

24 सितंबर 2024। प्रभु एवं गुरुचरणों में समर्पित प्रार्थना से भक्ति करने के पश्चात् आयोजित विशाल धर्मसभा को संबोधित करते हुए बहुश्रुत, वाचनाचार्य, उपाध्याय प्रवर ने अपनी दिव्य तेजस्वी वाणी में फरमाया कि **''ऐसा कोई व्यक्ति नहीं है जो किसी समस्या से ग्रस्त नहीं हो। समस्या सबको है, पर एकाग्रता कैसे बढ़ाएँ? घर, व्यापार छोड़कर यहाँ पहुँचे हैं। हमारा क्या उद्देश्य है। संतों के दर्शन करें। भगवन के दर्शन करें, वंदन करें, पर्युपासना करें। मात्र दर्शन, मांगलिक लक्ष्य नहीं रहे। ज्ञान, ध्यान, तपस्या की जो प्रेरणा मिल रही है उसे ग्रहण करें। सारे दर्शनार्थी प्रवचन सुनने नहीं आते। एकाग्रता जीवन की महान पुण्यवानी से प्राप्त होती है। हमारी प्राथमिकता क्या है? मन में सोचते कुछ और हैं तथा करते कुछ और हैं। जब हम उद्देश्य के प्रति एकनिष्ठ नहीं रहते तो हमारी एकाग्रता भंग हो जाती है। कामकुंभ – जिससे जो इच्छा की जाए वो पूर्ण हो जाए। कामकुंभ को बना बनाया प्राप्त करने से अच्छा है उसे बनाने की विधि सीखनी चाहिए। जिससे अगर बना बनाया कामकुंभ (घड़ा) फूट भी जाए तो उसे पुन: नया घड़ा बनाया जा सके।''**

इससे पहले श्री धीरज मुनि जी म.सा. ने असमाधि के कारण बताए। असत्य बोलना, कलह करना, पुराने कलह को वापिस जगाना, बार-बार निश्चयकारी भाषा बोलना आदि असमाधि के कारण हैं। साध्वी मंडल ने गुरुभक्ति गीत प्रस्तुत किया। विभिन्न त्याग-प्रत्याख्यान हुए।

रुचि-अरुचि पर हमारा नियंत्रण हो

25 सितंबर 2024। विशाल धर्मसभा को संबोधित करते हुए बहुश्रुत, वाचनाचार्य, उपाध्याय प्रवर श्रद्धेय श्री राजेश मुनि जी म.सा. ने फरमाया कि **''या तो वही काम करें, जिसमें हमारी रुचि हो, या जो कार्य कर रहे हैं उसमें हमारी रुचि पैदा कर लें। एकाग्रता तभी पैदा होगी जब रुचि-अरुचि पर हमारा नियंत्रण होगा। हम चाहते हैं कि हमारा मन एकाग्र हो, लेकिन हमारा उद्देश्य ही नहीं है कि हमारा मन एकाग्र हो तो कैसे होगा? एकाग्रता को बढ़ाने की कोई चीज है तो वह है रुचि व अरुचि। तुम वही काम करो जो परिणाम देने वाला है। ऐसा काम मत करो जो तत्कालीन इच्छाओं को पूर्ण करने वाला है। यदि हम चाहें तो मन पूर्ण एकाग्रता को प्राप्त कर सकता है। एकाग्रता में वो ताकत है, जिसके माध्यम से मन अपनी पूर्ण शक्ति को प्रकट कर सकता है। गुरु एक दिशा-निर्देशक है। हमें हमारी दिशा पर स्थिर रखने वाले हैं, जो कहते हैं कि इधर नहीं जाना, उधर नहीं जाना।''**

श्री धीरज मुनि जी म.सा. ने फरमाया कि जितना आवश्यक हो उतना ही बोलें। जो व्यक्ति बार-बार असत्य बोलता है, वह व्यक्ति असमाधि में जाता है। ज्यादा बोलने वाला दु:खी होता है। साध्वी मंडल ने *'बहुश्रुतजी महान गुणों की खान हैं'* गुरुभक्ति गीत प्रस्तुत किया।

मैं चैतन्य हूँ, आत्मा हूँ

26 सितंबर 2024। भोर के दैनिक कार्यक्रमों का शुभारंभ प्रात:कालीन मंगलमय प्रार्थना से हुआ। तत्पश्चात् आयोजित विशाल धर्मसभा को संबोधित करते हुए परमागम रहस्यज्ञाता आचार्य भगवन् ने अपनी दिव्यदेशना में फरमाया कि *''हम अनादिकाल से कभी नरक गति में, कभी तिर्यंच गति में, कभी देव गति में तथा कभी मनुष्य गति में गए। इन चार गतियों में भ्रमण करने का कार्य किया है। इससे हटकर हमने क्या किया? तीर्थंकर देवों की वाणी का सार है कि हमारे भीतर आत्मबोध जागृत हो कि मैं कौन हूँ? मैं शरीर नहीं हूँ, जड़ पदार्थ नहीं हूँ। मैं चैतन्य हूँ, मैं आत्मा हूँ। यह बोध यदि जागृत हो जाता है तो हमारी भाव निद्रा खुल जाएगी और हम आत्म-तत्त्व के विषय में सोचने वाले बन जाएँगे। जो प्रमाद में जीता है, जो आरंभ हिंसा में जीता है, अशुभ विचारों में बह रहा है, अशुभ प्रवृत्तियाँ कर रहा है, तो वह आरंभजीवी है। आरंभ का अर्थ है - जीव हिंसा, जीवों की विराधना। अनारंभजीवी अप्रमत्त साधु होता है। दूसरों को असभ्य वचन बोलते हैं, दूसरों पर भयंकर क्रोध करते हैं, ऐसे लोग तदुभयारंभी होते हैं। समभाव से आत्मा को जिसने भावित कर लिया, वह निश्चित रुप से मोक्ष का वरण करेगा।''* **'वैराग्य ज्योत को प्रकटित करना है ज्ञानालोक से'** में संयति राजा चारित्र भाग का सुंदर वर्णन आचार्य भगवन् ने फरमाया।

श्री धीरज मुनि जी म.सा. ने फरमाया कि अकाल में स्वाध्याय करने वाला असमाधि में जाता है। जो कार्य जिस समय होना चाहिए, उस समय नहीं होगा तो वह वैसा परिणाम नहीं देगा, जैसा देना चाहिए।

परम गुरुभक्त प्रकाशचंद जी कुचेरिया (कुसुमकसा, छ.ग.) ने गुरुचरणों में अंतिम साँस ली। **'थोकड़ों का शतक'** शिविर में साध्वी श्री विरल श्री जी म.सा. ने सुंदर समझाइश दी।

एक बार मोबाइल का स्विच ऑन करने में होती है असंख्यात जीवों की हिंसा

27 सितंबर 2024। प्रात: मंगलमय बेला में *'हे प्रभु पंच परमेष्ठी दयाला'* प्रार्थना की स्वर लहरी प्रस्फुटित हुई। विशाल धर्मसभा को संबोधित करते हुए विश्ववंदनीय आचार्य भगवन् ने अपनी दिव्यदेशना में फरमाया कि *''शास्त्र में जो भी वचन आया है, वह सत्य है। हमारी मति मंदता के कारण बात समझने में नहीं आ रही है तो हमारी क्षयोपशम की मंदता हमें समझनी चाहिए। आगम के वचन प्रमाण हैं। बंधन के दो कारण हैं - आरंभ व परिग्रह, अहिंसा व संग्रह। आसक्ति होगी तो संग्रह होगा। पहले लोगों में हिंसा के प्रति संवेदना होती थी, अब मोबाइल ने रही-सही संवेदना खत्म कर दी। सारे जीव जीना चाहते हैं इसलिए सभी जीवों को अपने समान मानें। हम अपने जीवन निर्वाह के लिए कितने जीवों की हिंसा करने वाले होते हैं। कुछ अर्थ हिंसा होती है, प्रयोजन के साथ हिंसा होती है। प्रयोजन मतलब जीवन निर्वाह और परिवार निर्वाह के लिए होती है। हम थोड़े भी फ्री हुए नहीं कि मोबाइल लेकर बैठ जाते हैं। एक बार मोबाइल का स्विच ऑन करने में असंख्यात जीवों की हिंसा होती है। हमारी संवेदना प्राय:-प्राय: लुप्त हो गई है। पहले घरों में चूल्हे जलते थे, लकड़ी को झटक करके आग में डालते थे। अब गैस ऑन करने से पहले विवेक का उपयोग नहीं करते और चूल्हे के नीचे छिपकर रहने वाले कई जीवों की विराधना हो जाती है। हम सुविधाओं*

में जीना चाहते हैं। हम हमारी सुविधा के लिए कितने जीवों की घात करने वाले बन जाते हैं, इसकी कोई गिनती नहीं है।''

श्री धीरज मुनि जी म.सा. ने फरमाया कि हमें रायचंद-हुकूमचंद नहीं बनना है, अपितु विनयचंद बनना है। प्रतिदिन 14 नियम चितारने चाहिए। जिनकी जितनी उम्र है उतने नवकार मंत्र गिनने का प्रत्याख्यान कई भाई-बहनों ने लिया। समता युवा संघ के अध्यक्ष ने त्याग-प्रत्याख्यान के लिए प्रेरणा दी।

क्षमा वीरों का आभूषण

28 सितंबर 2024। प्रात: मंगलमय बेला में प्रार्थना के माध्यम से आराधना की गई। धर्मसभा को संबोधित करते हुए दया एवं करुणा के सागर आचार्य भगवन् ने अपनी दिव्यदेशना में फरमाया कि *''जिसका मन आर्त्तभाव में चलता रहता है, उसका मन जीर्ण हो जाता है और उसे आत्मा का बोध होना कठिन है। बार-बार मन आकांक्षाओं, इच्छाओं में चलता रहे तो मन जीर्ण हो जाता है। मन में एक ही विचार बार-बार क्यों आता है? क्योंकि हमने कोई निर्णय नहीं किया। यदि हमने निर्णय कर लिया और उसके बाद भी दिमाग में वह बात आ रही है तो हम कहेंगे कि यह उसकी आदत हो गई है। जिसका मन जीर्ण हो गया है उसमें यदि हम धर्म की चीज देंगे तो वह उसको झेल नहीं पाएगा। क्षमा का भाव होना धर्म का बोध है। क्षमा वीरों का आभूषण है, कायरों और कमजोरों का नहीं। कायर-कमजोर व्यक्ति क्षमा नहीं कर पाता। उसमें क्षमा का भाव भी पैदा नहीं होता। वह यदि प्रतिकार नहीं कर पाएगा तो आर्त्तभाव में चला जाएगा। जो इच्छाएँ, आकांक्षाएँ हों उनको सीमित करें। आदमी का दिमाग क्लेश और कषायों से भारी रहता है। कायरों का बोझ है कषाय और वीरों का बोझ है संयम, जो वे बड़ी आसानी से उठा लेते हैं। जब तक इच्छाएँ, आकांक्षाएँ, तृष्णाएँ रहेंगी, तब तक भगवान की वाणी हमारे भीतर नहीं उतर पाएँगी। हम साधना, आराधना जरूर करते हैं, किंतु उसका जो परिणाम मिलना चाहिए वह नहीं मिल पाता है।''* '**वैराग्य ज्योत को प्रकटित करना है ज्ञानालोक से**' में संयति राजा चारित्र भाग का सुंदर विवेचन आचार्य भगवन् ने फरमाया।

श्री धीरज मुनि जी म.सा. ने फरमाया कि संत दर्शन के लिए जहाँ भी जाते हैं, सामायिक की आराधना के साथ अन्य सभी धार्मिक कार्यक्रमों में अवश्य भाग लें। स्वाध्यायी, समाज व संघ के सजग प्रहरी हैं। उन्हें स्वाध्यायी से श्रमण बनने की दिशा में आगे कदम बढ़ाना चाहिए।

साध्वी मंडल ने गुरुभक्ति गीत प्रस्तुत किया। महत्तम दैनिक उपासना के अंतर्गत 9 नवकार, 9 लोगस्स, 9 णमोत्थु णं के साथ 9 बार गुरु वंदना का नियम कई भाई-बहनों ने लिया। श्री इभ्य मुनि जी म.सा. इस चातुर्मास में अपनी छठी अठाई के लिए अग्रसर हैं। स्वाध्यायियों को बहुश्रुत, वाचनाचार्य, उपाध्याय प्रवर एवं चारित्रात्माओं का विशेष मार्गदर्शन प्राप्त हुआ। नोखामंडी संघ ने आचार्य भगवन् के आगामी वर्ष 2025 के चातुर्मास हेतु पुरजोर विनती गुरुचरणों में प्रस्तुत की। निकुंभ, अहमदाबाद, जगदलपुर संघ ने भी विनतियाँ प्रस्तुत कीं। '**थोकड़ों का शतक**' शिविर में साध्वी श्री विरल श्री जी म.सा. ने मार्गदर्शन प्रदान किया।

देव, गुरु, धर्म पर अटूट श्रद्धा होनी चाहिए

29 सितंबर 2024। प्रात: रविवारीय समता शाखा में समता आराधना करने हेतु जनसैलाब उमड़ पड़ा। समता आराधना पश्चात् प्रवचन स्थल पर आयोजित विशाल धर्मसभा को संबोधित करते हुए विश्ववंदनीय, मानवता के मसीहा आचार्य भगवन् ने अपनी दिव्यदेशना में फरमाया कि *''हिंसा में जितने रत रहेंगे, उतना ही मन कमजोर होगा, चित्त अशांत होगा। त्याग और प्रत्याख्यान मन को सुदृढ़ बनाने वाले होते हैं। धर्म श्रद्धा से जीव को किस फल की*

प्राप्ति होती है? धर्म श्रद्धा से जीव इंद्रियों के विषयों की साता से विरक्त हो जाता है। अब तक इंद्रियों के पोषण में लगे हुए थे। अमुक पदार्थ मनोज्ञ है और अमुक पदार्थ अमनोज्ञ है। धर्म श्रद्धा चित्त को मजबूत करने का साधन है। धर्म क्रिया करना एक बात है और धर्म में जीना दूसरी बात है। धर्म हमें कषाय-क्लेश नहीं सिखाता, धर्म हमें सहन करना सिखाता है। भगवान महावीर को बहुत सारे कष्ट आए, किंतु वे विचलित नहीं हुए। सेठ सुदर्शन, राजा हरिश्चंद्र, मर्यादा पुरुषोत्तम राम कष्टों में थे, लेकिन कोई भी कष्ट उनको डिगाने वाला नहीं बना। धर्म की श्रद्धा से जिसने अपने आपको भावित कर लिया, फिर उसके सामने कितनी ही समस्याएँ आ जाएँ वह हिलेगा नहीं। देव, गुरु, धर्म को जो पहचान जाता है, वह सच्चा बुद्धिमान होता है। उनकी शरण ली जाए जो वस्तुतः हमें दुःखों से निकाल सकें और वह ताकत देव, गुरु, धर्म में है। तन जाए तो जाए, पर मेरा सत्य धर्म नहीं जाना चाहिए। शरीर, धन, घर, परिवार चला जाए, पर सत्य धर्म नहीं जाना चाहिए। हमारे भीतर अटूट विश्वास होना चाहिए कि यदि कोई हमें दुःख से तिराएगा तो देव, गुरु, धर्म ही तिराएँगे। अन्य देवी-देवताओं को मानने की बजाय हमारी नवकार महामंत्र पर गहरी आस्था होनी चाहिए।''

बहुश्रुत, वाचनाचार्य, उपाध्याय प्रवर ने अपनी ओजस्वी वाणी में फरमाया कि **''चित्त चंचल है। जब किसी भी बाहर की घटना का प्रभाव हमारे अंदर गहराई तक पहुँच जाता है तो चित्त चंचल हो जाता है। अगर हमारा चित्त बहुत मजबूत है, सुनियोजित है तो बाहर की किसी भी घटना का प्रभाव हमारे चित्त तक जाए, यह जरूरी नहीं है। जिसका चित्त शांत है, स्थिर है तो बाहर की समस्याएँ उस चित्त को उद्वेलित नहीं कर पाती। हमारी साधना उस उच्च स्तर को प्राप्त करे कि बाहर की घटनाओं का प्रभाव हमारे चित्त पर नहीं पड़े। हमारी आत्मा में अनंत सुख और शक्ति है, अनंत ज्ञान और दर्शन है, शांति का अथाह सागर है। हमारी आत्मा के कण-कण में वीतरागता भरी हुई है। जरूरत इस बात की है कि हमारी संपूर्ण धर्म-साधना हमें उस आत्मानुभूति तक पहुँचाए। हम चित्त की गहराई में पहुँचे। हमारा चित्त अंदर से शांत-प्रशांत बने।''**

श्री धीरज मुनि जी म.सा. ने फरमाया कि महापुरुषों का एक-एक वचन हमें कल्याण की दिशा में आगे बढ़ाने वाला होता है।

आर से मिलती है कुशलता

30 सितंबर 2024। प्रवचन स्थल पर विशाल धर्मसभा को संबोधित करते हुए बहुश्रुत, वाचनाचार्य, उपाध्याय प्रवर ने अपनी ओजस्वी वाणी में फरमाया कि **''हार्ड वर्क महत्वपूर्ण नहीं है। लेकिन स्मार्ट वर्क बहुत ही महत्वपूर्ण होता है। बहुत मेहनत करने का अच्छा परिणाम मिल जाए, ऐसी बात नहीं है। बहुत कम मेहनत का भी बहुत अच्छा परिणाम मिल सकता है। कार्य की कुशलता किसी कार्य में बहुत ज्यादा समय देने मात्र से नहीं आती। कार्य की कुशलता किसी कार्य का सार पकड़ने में आती है। कार्य करना एक रूटिन है, लेकिन उस काम से अलग हटकर देखना है कि यह कम समय में ज्यादा परिणामदायक कैसे हो सकता है। वह एक उपयोग है। मन की एकाग्रता से चित्त का निरोध होता है।''**

श्री धीरज मुनि जी म.सा. ने फरमाया कि जो व्यक्ति अपने स्वार्थ और अनुकूलता को नहीं त्यागता है, वह असमाधि में चला जाता है। यदि सब अनुकूल रहा तो हमारा विकास नहीं होगा।

प्रतिदिन दैनिक धार्मिक कार्यक्रमों के आयोजन के साथ दोपहर में आगम वाचनी, ज्ञानचर्चा, प्रश्नोत्तरी आदि कार्यक्रमों में आगमसम्मत जिज्ञासा समाधान पाकर श्रोता धर्म को अंगीकृत कर रहे हैं। भीलवाड़ा एवं मेवाड़ क्षेत्र राम गुरु की सुखद छाँव में अध्यात्म के रंग से सराबोर हो रहा है।

तपस्या सूची

संत-सती वर्ग

श्री इभ्य मुनि जी म.सा. 8 उपवास
(इस चातुर्मास में अब तक छठवीं अठाई संपन्न की)
श्री हैमगिरि मुनि जी म.सा. 9 उपवास

शासन दीपिका साध्वी श्री कुसुमकांता जी म.सा.
9 उपवास

श्रावक-श्राविका वर्ग

आजीवन शीलव्रत	पारसमल जी निर्मला जी कोठारी-सूरत, अशोक जी बम्बोरिया-जावद, गौतम जी शीला देवी जैन-कोटा, आनंदीलाल जी राजकुँवर जी मेहता-दलौदा, महेन्द्र जी कुसुम जी सेठिया-बीकानेर, बसंतीलाल जी भादविया-बोहेड़ा, बसंतलाल जी ओस्तवाल-रतलाम, गौतम कुमार जी मुणोत-रतलाम, रमेश जी कांता देवी कोठारी-सूरत, बालचंद जी सुशीला देवी मेहता-बीकानेर, विजय जी शोभा जी सखलेचा-नरडाणा, चंद्रलाल जी परमार-लसुजा सोडा, धनराज जी जैन, चंद्रा सिंह जी चंडालिया, भैरूंलाल जी सुराना-गंगापुर, राजेंद्र जी मेहता-बड़ीसादड़ी, दिलीप जी पारख-महरूम कलां, हुकुमचंद जी प्रमिला देवी बोहरा-शिरपुर, हरीश जी कविता जी कातरेला-विल्लुपुरम, महेंद्र जी संगीता देवी कातरेला-विल्लुपुरम, नीलम जी प्राची जी पोरवाल-सुजालपुर, प्रदीप जी, सुरेश जी खिंवसरा-धुलिया, कन्हैयालाल जी शारदा देवी कोठारी-रतलाम, चंदनमल जी ललिता जी पितलिया-अहमदाबाद
गाथा का स्वाध्याय	**2 लाख -** चंदा बाई बोहरा-बखतगढ़
	डेढ़ लाख - इंद्रकला जी देसरड़ा-पुणे
	1 लाख - प्रमिला देवी बोथरा-गंगाशहर, सुशीला जी सुराणा-गंगाशहर
	5 हजार - शशिबाला जी मेहता-जावरा
पक्की नवकारसी	**आजीवन -** प्रकाश जी आंचलिया-जयपुर/देशनोक
सामायिक	**वर्ष में 1350 -** सागरमल जी-नीमच
वर्षीतप	शोभा बाई चतुर्मूथा-दोंडाईचा, ममता जी सेठिया-जावरा
उपवास	**90 -** हेमलता जी बाँठिया-नोखामंडी
	51 - सुनंदा जी पारख-दुर्ग, किरण कुमार जी हींगड़-रायपुर/भीलवाड़ा
	41 - वीरा देवी दुग्गड़-सोमेसर
	35 - प्रेरणा देवी संचेती-नोखामंडी
	31 - कुंदन सिंह जी डूंगरपुरिया-उदयपुर, ममता जी ओस्तवाल, करिश्मा जी मारू, नंदलाल जी साल्वी-निकुंभ
	मासखमण - विजय कुमार जी सांड-देशनोक (32वाँ), हेमलता जी बोरूंदिया-ब्यावर, सूर्यप्रकाश जी मूलावत, विजयश्री जी लालानी, करिश्मा जी मारू, ऊषा जी वया-कांकरोली, सम्पत जी पीपाड़ा

	25 - मीना जी रांका-बड़ीसादड़ी
	11 - पुष्पा जी मूलावत
	9 - तनिषा जी दलाल-बड़ीसादड़ी
	अठाई - पुष्पलता जी बरमेचा, मोहित जी बुच्चा

अन्य कई गुप्त तपस्याएँ जारी...

-महेश नाहटा

(आचार्य श्री नानेश की पुण्यतिथि पर विशेष)

भक्ति रस

यादें

- जौहरीमल सुराणा, धुबड़ी

यादों को तेरी संजोते रहे सारी उम्र हम,
आपकी कसम आपकी कसम।
पलभर को भी भुला न पाए आज तक हम,
आपकी कसम आपकी कसम।।

भीषण उपसर्गों में देखा अद्भुत धैर्य तुम्हारा,
अद्भुत धैर्य तुम्हारा।
क्षमाशील संतोष धारकर व्रतों को गजब संवारा,
व्रतों को गजब संवारा।
कौशल तेरा निहारते रहे सारे श्रावक जन,
आपकी कसम आपकी कसम।।

धर्म भावनाओं में देखा शिथिलता का दौर,
शिथिलता का दौर।
व्याकुल तेरा मन हो गया देख भविष्य की ओर,
देख भविष्य की ओर।
ज्ञान चेतना फिर से जगाकर हम पर किया रहम,
आपकी कसम आपकी कसम।।

चिंतन व्यक्ति समाज चिंतन अनुपम सोच तुम्हारी,
अनुपम सोच तुम्हारी।
निज पर के हित साधन में दिव्य दृष्टि तुम्हारी,
दिव्य दृष्टि तुम्हारी।
गुरु रामेश के आदेश पर बढ़ रहे कदम,
आपकी कसम आपकी कसम।।

अतीत के झरोखों से युवाचार्य प्रवर श्री रामलाल जी म.सा.

प्रवचनामृत

—युवाचार्य प्रवर श्री रामलालजी म.

सुमति चरण रज आत्म अर्पणा..........

धर्म प्रेमी बन्धुओं ! आज का यह प्रसंग गुरु अष्टमी के
में उपस्थित हो गया है गुरुवार है और आज की तिथि को गु
संयम का बाना पहना, कोई गुरु अष्टमी के रूप में माने या न
यह अपना-अपना चिन्तन है, पर अष्टमी तो गुरु अष्टमी बन गई

पूर्व वक्ताओं से यह आज का विषय स्पष्ट हो गया। आचा
भगवन् के जीवन को किस रूप में व्यक्त करें और कहां से अभिव्य
दें, मोदक को जहां से चखें मीठेपन की ही अनुभूति होगी। आचा
भगवन् के जीवन को किसी भी पहलू से देखें, प्रेरणा का स्रोत मिले
एक ज्योति मिलेगी। जिनकी प्रखर प्रतिभा बचपन में ही
चुकी थी, पिता के वियोग से, व्यापारिक लाईन में पहुंचना
अनचाहे ही प्रकृति के अनुसार चलना पड़ा साझे का व्यापार
कन्हैयालाल जी पोखरना के साथ, तब बात रखी साझेदारी/पार्टनर-
शिप का मामला है आपको क्रोध आ जाए तो मैं मौन रहूंगा
मुझे क्रोध आ जाए तो आप मौन रहें। कितनी गहरी बात है।
बात को बम्बई के अभिषेक (गुजराती) पत्रिका ने "आचार्य
नानालाल जी म. सा. नु मजेदार सिद्धान्त" शीर्षक से प्रकाशित की

आचार्य भगवन् ने जाना संसार असार है। अधिकांश
संसार को असार जानते हैं व मानते हैं पर लगता कहां है।
व्यापारी वर्ग जो यहां बैठे हैं। दुकान में लाखों रुपये की आम
हो रही हो तो महाराज के व्याख्यान आज नहीं कल सुनेंगे, सार
बात होती है वहीं ध्यान जाता है, पर आपने संसार को अभी
...र नहीं जाना, सार रूप में मान रहे हैं।

मेघकुमार ने कहा — "अलित्तेणं भंते लोए पलित्तेणं
.........। लोक पुरा ज...

...का प्रसंग तो है नहीं। धर्म क्षेत्र में पहुंच
...धार्मिक क्रिया होनी चाहिए, धार्मिक कर्त्तव्य
...नहीं बनें, जिस महापुरुष के जीवन को हम
...लिए मात्र कान नहीं दिल भी चाहिए। दिल
...को सुनने के लिए डॉ. के पास स्टेथस्कोप (श्रव
...सुन लेते हैं पर हमारे पास कोई यंत्र नहीं।
...की धड़कन को सुनिये। आचार्य भगवन् ने संसा
...लिया, जान लिया। फिर गुरु की खोज में निक
...के, पानी पीजे छान के।" बदनौर में सबने कहा
...में दीक्षा लेंगे तो आचार्य बना दिया जायेगा। आ
...—मैं आचार्य बनने के लिए संयम नहीं ले रहा
...लिए बना जाता है? आत्मिक साधना के लिए
...नहीं तो आत्मिक साधना क्या कर पाओगे। अब
...दुःख से क्लांत है, जरा जीर्ण शरीर में रोग
...काम करती है, पर धीरे-धीरे। मजबूत पुष्ट शर
...शीघ्र प्रभाव पैदा करती है, शिथिल शरीर में
...जाती है और पुष्ट देह को व्याधि प्रभावित कम
...संयम से आत्मा पुष्ट है तो आत्मबल स्वतः बढ़ जात
...में सहनशीलता नहीं, कान में अपशब्द आते ही
...हो जाता है, पिता पुत्र को कुछ कह नहीं सकता,
...कहने में संकोच करते हैं। हवाएं किधर बह रही हैं
...कारण है व्यक्ति अपने आपको संयमित नहीं बना
...असीमित हो रही है। इच्छाओं का निरोध
...जब तक इच्छा का निरोध नहीं तब तक स
...ही सकती। संयम की पोषाक तो अनंत बा

सदैव हृदय-कक्ष में कैद हैं आराध्यदेव

—युवाचार्य श्री रामलालजी म. सा.

ब्यावर १४ फर.—समता विभूति आचार्य श्री नानालाल जी
म. सा. के सुशिष्य तरुण तपस्वी भावी शासन नायक युवाचार्य श्री
रामलाल जी म. सा. ने आज अपने विशेष उद्बोधन में फरमाया—
"प्रभु महावीर ने कहा है जीवन असंस्कारी है प्रमाद मत करो, असंस्कृत
जीवन में कोई बोध, जागृति, उन्नति नहीं हो सकती है।"

युवाचार्य प्रवर ने इसी क्रम में कहा—जैसे कुंभकार असंस्कृत
मिट्टी को मंगल कलश बनाकर सर्वोच्च मस्तक पर चढ़ा देता है वैसे
ही आचार्य देव ने भी ऐसा किया है पर सर्वोपरि स्थित घट धारक
में अप्रमत्तता, स्थिरता अगर न आये और वह उछल-कूद करे तो
कलश गिरकर चूर-चूर हो जाता है और पैरों तले ठोकरें खाने योग्य
बन जाता है। आवश्यकता है असंस्कारों से ऊपर उठकर संस्कार एवं
समाधि में जीऐं। आचार्य देव की भावनाओं को समझें, सारी स्थिति
सबके समक्ष है, संघरूपी सागर में ज्वार-भाटे आते रहे हैं; समुद्र में
ही यह सब घटित होता है, नदी, नाले, तालाब ज्वार-भाटे नहीं सह
पाते। श्री चम्पालाल जी जैन ने कहा—हमारे पास शीघ्र ही ज्ञान
...जी म. सा. आने वाले हैं ऐसा पत्र मिला है, मैंने कहा जरा मैं
पत्र को देखना चाहता हूं तब बोले— मैं ऐसी बातों में भाग नहीं

आचार्य भगवन् को कैद कर लिया ऐस
...र मेरा चिन्तन अलग ही चला। आज के दि
...२ सं. २०३१) देशनोकमें मैंने आचार्य भगवन्
...लिया था हर भक्त ऐसा कर सकता है। शिष्य
...आया है तभी तदाकार स्थिति बनती है कवि ने

तुझमें मुझमें भेद न पाऊं ऐसा हो स

जय — ३..............

जिस दिन यह एकात्मता, अभेद, तदाका
हम अपने लक्ष्य को पा सकेंगे। अन्यथा चार गति

रामायण का प्रसंग है राम के लंका
समारोह रखा गया। रावण पर विजय में जित
का सम्मान किया गया, सुग्रीव, विभीवण आदि
गये, सभा विसर्जित होने लगी तो सीता ने धी
हनुमान को कुछ न दिया, नाम भी नहीं लिया
कार्यक्रम पूरा हो गया मेरे पास देने को कुछ
को दुःख हुआ कि हनुमान ने इतना लोहा लिय
तक न लिया। सीता ने नवलहार राम
लेकर क्या किया तोड़ दिया। लोगों

दृष्टि अभी तुम्हारे पास नहीं है। अतएव पहले अपने अन्तः...
...टटोलो। आज का व्यक्ति भी उसी स्थिति में है। सांसारिकता में
...कंठ लिप्त है। अध्यात्म के क्षेत्र में भी वह परमुखापेक्षी बना हुआ
है। व्यक्ति स्वयं को जगाने की बजाय, दूसरों को जगाने की चेष्टा
कर रहा है। पहले स्वयं तो निद्रा त्यागो। कषायों को समझो और
उनसे छुटकारे का मार्ग खोजो। नाभि-कमल को जगाओ और उसके
लिए साधना में रत हो जाओ।

इस अवसर पर विद्वान तपस्वी विद्वद्वर्य सेवाभावी श्री राजेश
मुनिजी म. सा. और विदुषी मधुर व्याख्यानी महासती श्री सुमन
प्रभाजी ने भी अपने उद्गार व्यक्त किए। संघ के प्रचार-प्रसार संयो-
जक श्री वीरेन्द्रसिंह लोढ़ा ने बताया कि आज से ही पौषधशाला में
अखण्ड नवकार मंत्र का जाप प्रारम्भ हुआ है। उन्होंने कहा कि तप-
स्या के क्रम में आज विद्वान तपस्वी श्री विवेक मुनिजी म. सा. के
३२, महासती श्री सुरभि श्री जी म. सा. के २८ और तरुण तपस्विनी
महासती श्री विनय श्री जी म. सा. के ११ उपवास की तपस्या का
क्रम जारी रहा। धर्म सभा का संचालन श्री भगवतीलालजी खेमली-
वाला ने किया।

दिनांक ८ सितम्बर को अपने प्रवचन में युवाचार्य प्रवर ने
फरमाया कि—पर्युषण पर्व में मन की सारी ग्रंथियों को खोल कर
आराधना करने से ही इस पर्व की सार्थकता को प्रकट किया जा
सकता है। जैसी हमारी दृष्टि होगी, सृष्टि भी वैसी ही दिखाई देगी।
अतः सबसे पहले हमें दृष्टि अपने पर डालनी चाहिए, अपनी

...है। इन्द्रियों को वश में करने के लिए सर्वप्रथम मन पर
...जानी चाहिए। भगवान महावीर सहित सभी तीर्थंकर देव
कैवल्य प्राप्ति से पूर्व घोर तपश्चर्या द्वारा इन्द्रियों को अपने वश में
कर लिया था। उसके पश्चात् उन्हें कभी किसी प्रकार तपस्या की
आवश्यकता ही न रही। वे समस्त बातों-चीजों से ऊपर उठ गये।
इसी मार्ग का अनुसरण करने के लिए प्रेरित करता है, पर्युषण पर्व।

धर्म सभा को श्री अचल मुनिजी और श्री राजेश मुनिजी
म. सा. ने भी सम्बोधित किया। श्री विवेक मुनिजी म. सा. ने ३३
की तपस्या का पारणा पांच अभिग्रहों के साथ किया।

पावन-पुनीत पर्युषण पर्व के चौथे दिन दि. १० सितम्बर
को अपने प्रवचन में युवाचार्य प्रवर ने फरमाया कि—परमात्मा, आत्मा
से भिन्न नहीं है। परमात्मा के पास न तुम किसी को ले जा सकते
हो और न कोई अन्य तुम्हें उन तक पहुंचा पायेगा। इसके लिए तो
अकेले ही तैयारी करनी पड़ेगी। आपने कहा कि ईश्वर को प्राप्त
करना सहज नहीं है। राजनेताओं से मिलने, सुनने और देखने जाने
वालों को भी मेटल डिक्टेक्टर से गुजरना पड़ता है, जबकि वे साधा-
रण मनुष्य हैं। फिर भगवान से आसानी से मिलना कैसे सम्भव हो
सकता है। भगवान के दर्शनों के लिए भी हमें तमाम सांसारिक
पदार्थों और कषायों को अपने से बाहर करते हुए भीतर की ओर
प्रवेश करना होगा। कस्तूरी-मृग की भांति भ्रम में कुलांचे मारना
छोड़ना होगा। इच्छाओं का कोई अन्त नहीं है। वे नित नई होती
और बढ़ती है। अतएव मन का सारा मैल धुलना चाहिए। काम,
...मद, मोह इत्यादि कषायों को अपने से दूर करना होगा।

अन्याय अनीति से हटकर धर्म नीति से चले तो जन्म लेना
...यक होगा। प्रभु महावीर के सिद्धान्तों पर चलकर अपने जीवन
को शान्तिमय बनाये। शाकाहार से जुड़े, एबोंसन से बचने का प्रयास
करें। इन सत्यों पर चिंतन मनन कर जीवन से जोड़े तो मंगलमय
स्वरूप प्राप्त कर पायेंगे, शान्ति प्राप्त कर पायेंगे।

❀ ❀ ❀

प्रशान्तमना युवाचार्य प्रवर जी का उद्बोधन

आज देवाधिदेव विश्व हितंकर जगत के कल्याण करने वाले
परम पावन पवित्र पुरुष का जन्म दिवस है उनकी जन्म जयन्ती है।
इससे आप सुविदित हो चुके हैं। क्या कारण है कि हम भी प्रभु की
जन्म जयन्ती मना रहे हैं। माता की कुक्षि से उनका जन्म हुए
२५९७ वर्ष हो चुके हैं फिर क्या कारण है कि हम प्रभु की जन्म-
जयन्ती आज तक मनाते चले आ रहे हैं? वे हमारे तीर्थंकर-तीर्थ
स्थापक हैं इसलिए जन्म-जयन्ती मना रहे हैं। वे विश्व के समस्त
प्राणियों को अभयदान देने वाले हैं। आप कई बार श्रवण कर चुके
हैं कि ५०० पाडों की रक्षा करने वाले की नरक टल जाती है फिर
समस्त लोक की रक्षा करने वालों को तो एकमात्र मुक्ति ही मिलती
है। प्रभु महावीर ने जीव रक्षा के लिए विशिष्ट कार्य किये। जिस
समय प्रभु महावीर ने जन्म लिया हिंसा का ताण्डव नृत्य हो रहा
था। आज भी बकराईद सामने हैं उस समय मनुष्यों को भी यज्ञ के
...यम से होम (बलि) कर दिया जाता था। ऐसे समय में उन्होंने
...ज बुलन्द की सत्य पथ दिखलाने की। उनके प्रयास से अनेक

भगवान महावीर के भी चार हाथ थे।
अतिशयोक्ति नहीं होगी। उनके चार हाथ
श्राविका। एक हाथ साधु, दूसरा साध्वी, ती...
श्राविका। आज भी प्रभु के दर्शन करने हो तो इन
सशक्त रूप से मौजूद हैं। इस रूप में पांचवें आरे
जिन्दे रहेंगे। अनेक व्यक्ति आत्म कल्याण को प्राप्त

इतिहास उठाकर देखिये। समय-२ पर
दिशा बोध प्राप्त किया है। आचार्य भगवन् ने
जाति के लाखों लोगों का उद्धार किया। ओसियां
...री रहती थी। आचार्य श्री रत्नाकर सूरि ने उ
ऐसी क्रान्तियां समय-२ पर होती रहती है। जैन
सोपान है सात कुव्यसनों का त्याग। इसके बिना
का नाम लिया जा सकता है। लेकिन ऐसी ऊपरी
कितनी पसन्द आयेगी। इसी बीच आपने फरमाया
के दो पत्नियां थी, बड़ी जी व लोड़ी जी। एक बार
में तपे हुए धूप से घबराते हुए, पसीने से युक्त, कड़क
आते हैं। दरवाजा खटखटाते हैं। बड़ी जी मेन
में मोतीलाल जी के नाम की माला फेर रही थी।
खटाहट सुनकर मोतीलाल जी से कहती है ठहरो—
माला फेर रही हूं। माला बीच में नहीं छोड़ स
ऊपर काम कर रही थी जैसे ही सुना दरवाजा खो
बिठाती है, पैर धोती है और विश्राम करने के
पिलाती है। बड़ी जी ने जाप में कमी न...
सेवा में कमी नहीं रखी। लेकिन यह जा...

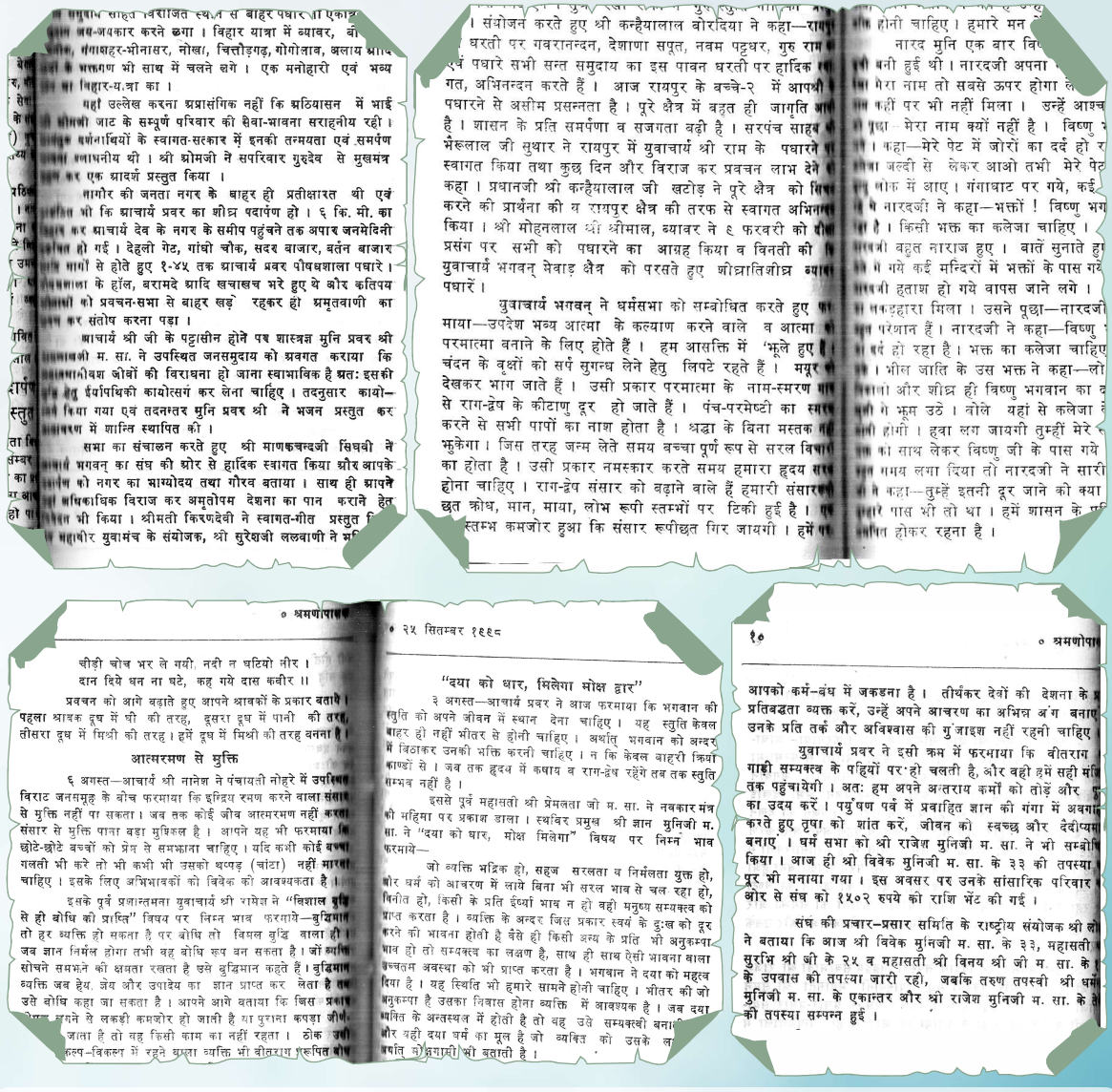

महत्तम महापुरुष आचार्य श्री रामलाल जी म.सा. का जीवन यूँ ही महत्तम नहीं बन गया। आपश्री जी जीवन के प्रारंभ से ही महत्तम बनने की ओर गतिमान हैं। बचपन में मिले उच्च पारिवारिक संस्कार एवं माँ गवरा देवी व पिता नेमीचंद जी भूरा के उच्च गुणपरक जीवन से आपने सार रूप नवनीत ग्रहण कर अपने जीवन को संयम मार्ग पर अग्रसर करने का विचार कर लिया और शनैः शनैः इस विचार को और अधिक तीक्ष्णता देते रहे। उसी दृढ़ता, सौम्यता, शौर्यता एवं आत्मसंयम के बल से आपने दीक्षा ग्रहण कर अपने गुरु की आज्ञा पालन एवं सेवा में जीवन समर्पित कर दिया। नकारात्मक परिस्थितियों में भी आपने कभी भी अपना मनोबल नहीं गिरने दिया। आपश्री जी की संयम में दृढ़ता, जिनशासन के प्रति समर्पणा को देखते हुए क्रमशः मुनि प्रवर, युवाचार्य एवं आचार्य पद की धवल चादर प्रदान की गई। आज हम उन्हीं महापुरुष का 50वाँ दीक्षा वर्ष मना रहे हैं। उसी उपलक्ष्य में आपश्री द्वारा युवाचार्य प्रवर के रूप में फरमाए गए प्रवचनों के कुछ अंश अतीत के झरोखों से...।

रचनाएँ आमंत्रित

आप संघ के मुखपत्र के नियमित पाठक हैं यह हमारे लिए हर्ष का विषय है। श्रमणोपासक के प्रत्येक माह के धार्मिक अंक विभिन्न विषयों पर आधारित होते हैं। विशिष्ट पाठकों, लेखकों व अन्य जनों के लिए श्रमणोपासक गुरु गुणानुवाद का विशेष अवसर उपस्थित कर रहा है। श्रमणोपासक के **अक्टूबर 2024 धार्मिक अंक** से **मार्च 2025 धार्मिक अंक** तक के सभी प्रकाशन **आचार्य भगवन् के गुणों, विशेषताओं, साधना व संयमी जीवन, संघ के प्रति आचार्य भगवन् का चिंतन, संघ समर्पणा क्यों आवश्यक, महत्तम आरोग्यम्** पर आधारित रहेंगे। उपर्युक्त विषयों पर आधारित रचनाएँ आप सभी से सादर आमंत्रित हैं। चूँकि महत्तम शिखर वर्ष गतिमान है, अत: हम सभी को महत्तम महापुरुष के गुणों का बखान कर कर्मनिर्जरा करने एवं उन गुणों को आत्मसात करने का अपूर्व अवसर उपलब्ध हुआ है। हम सभी अपने गुरु के गुणानुवाद कर इस अवसर का लाभ उठावें।

सम्माननीय पाठकगण अपनी रचनाएँ शीघ्रातिशीघ्र भिजवाने का लक्ष्य रखें। इन विषयों पर आलेख के साथ-साथ आप अपने अनुभव एवं संस्मरण भी भिजवा सकते हैं। यदि आपके पास श्री अखिल भारतवर्षीय साधुमार्गी जैन संघ द्वारा साधुमार्गी परिवारों को जारी M.I.D. (ग्लोबल कार्ड) नं. हो तो उसका उल्लेख अवश्य ही करें। प्राप्त मौलिक एवं सारगर्भित रचनाओं को समाहित करने का लक्ष्य रहेगा। विषय संदर्भित आपकी रचनाएँ – लेख, कविता, भजन, कहानी आदि हिंदी व अंग्रेजी में सादर आमंत्रित हैं।

उपर्युक्त विषयों के अतिरिक्त अन्य विषयों पर भी आपकी रचनाएँ, संस्मरण, कविताएँ, लेख, कहानियाँ या अन्य कोई ऐसी विषयवस्तु जो सर्वजन हिताय प्रकाशित की जा सकती हो, तो इन रचनाओं का भी सहर्ष स्वागत है। आप अपनी रचनाएँ दिए गए मोबाइल व वॉट्सएप्प नंबर या ईमेल द्वारा भी भेज सकते हैं।

-श्रमणोपासक टीम

9314055390 | **news@sadhumargi.com**

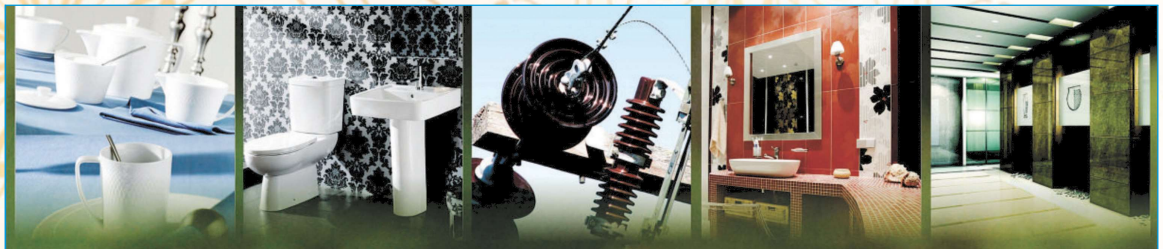

Serving Ceramic Industries Since 1965

हु शि उ चौ श्री ज ग नाना, राम चमकते भानु समाना।
तरुण तपस्वी, प्रशांतमना आचार्य प्रवर 1008 श्री रामलाल जी म.सा.
एवं समस्त चारित्रात्माओं के चरणों में कोटिश: वंदन

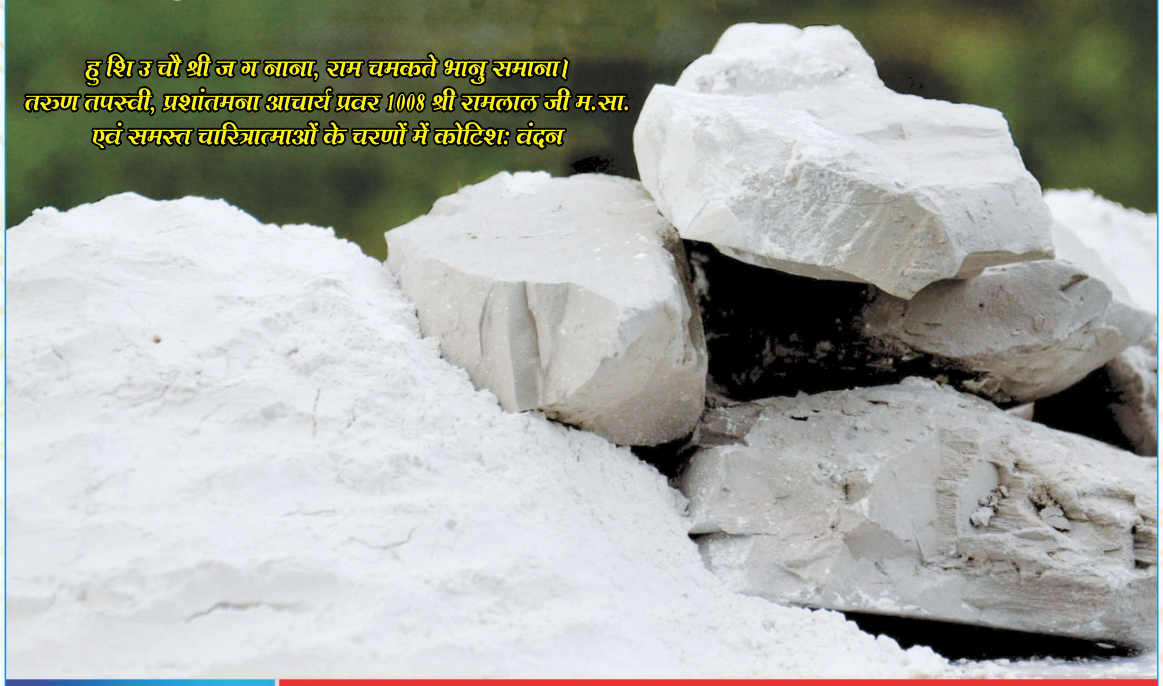

A Premier Clay Specialists in The Country...

- 48 years of experience with efficient processing technology and high-quality deposits of raw materials.
- Extraction, Processing and Refining of industrial minerals, particularly Ball Clay, China Clay, Bentonite, Silica Sand, Quartz, Potassium & Sodium Feldspar.
- In-depth knowledge of the market and understands the need for high-grade raw materials in the ceramic industries.
- Extraction of raw materials to the final delivery of the finished product, all of our procedures are subjected to ongoing quality monitoring.
- Export good quantity of minerals to various countries.
- Import of many others minerals and raw materials for Indian ceramics industries.

JLD MINERALS
Jaichand Lal Daga group

Corporate Office :
1st Floor, Labhuji Ka Katla,
Bikaner-334001, Rajasthan, INDIA

Phone : +91-151-2220380 / 2521624 / 3294234
FAX : +91-151-2522768, Mobile No. 09829217944
Email : wbcclay@yahoo.com

www.jldminerals.com

SIPANI

सिपानी सेवा सदन - 1

सिपानी समूह ने मानव सेवा के क्षेत्र में एक ऐसा हस्ताक्षर अंकित किया है, जो सदियों तक स्मरण किया जाता रहेगा। समूह ने अपने प्रथम चरण में सिपानी सेवा सदन-1 - बंदापुरा विलेज मडिवाला ग्राम, मर्सुर पोस्ट, अनेकल तालूक, बेंगलूरु - 562106 में 12 वर्ष पूर्व जिस योजना को क्रियान्वित किया उसके अंतर्गत सदन की बहुमंजिला इमारत में 400 मरीजों एवं उनकी देखरेख करने वाले नर्स, कर्मचारी आदि की व्यवस्था रखी गई है।

सिपानी सेवा सदन - 2

सेवा के कदम आगे बढ़ाते हुए सिपानी समूह ने सिपानी सेवा सदन - 2 का निर्माण कार्य प्रारम्भ करवा दिया है। इस भवन में उपरोक्त के अतिरिक्त 500 मरीजों एवं उनके लिए आवश्यक डॉक्टर, नर्स कर्मचारी एवं एम्बुलेंस आदि की सुविधा उपलब्ध रहेगी।

इसका उद्घाटन फरवरी 2025 से पहले होना संभावित है।

SIPANI

Sipani Seva Sadan-2
Address No. 149/1 & 150/1 Bandapura village, Madivala grama, Marsur post Anekal taluk, Bangalore 562106
Phone number +91 8431 888 000 & +91 9513 361 335

हु शि उ चौ श्री ज ग नाना,
राम चमकते भानु समाना।
तरूण तपस्वी, प्रशांतमना आचार्य प्रवर
1008 श्री रामलाल जी म.सा.
एवं समस्त चारित्रात्माओं के चरणों में
कोटिशः वंदन!

SIPANI MARBLES

STRONG - STYLISH - SOPHISTICATED

Royal Italian Marbles

AS PER ISI STANDARDS

WWW.SIPANIMARBLES.COM

संघ से संबंधित विभिन्न जानकारियां

प्रकाशक

श्री अखिल भारतवर्षीय साधुमार्गी जैन संघ

प्रधान कार्यालय

समता भवन, आचार्य श्री नानेश मार्ग,
नोखा रोड, गंगाशहर, बीकानेर-334401
(राज.) फोन : 0151-2270261
helpdesk@sadhumargi.com

अध्यक्ष एवं प्रधान संपादक

नरेन्द्र गांधी, जावद

सह संपादिका

श्रीमती मोनिका जय ओस्तवाल, ब्यावर

श्रमणोपासक सदस्यता

केवल भारत में	1,000/- (15 वर्ष के लिए)
विदेश हेतु	15,000/- (10 वर्ष के लिए)
वाचनालय हेतु (केवल भारत में)	
वार्षिक	50/-

संघ सदस्यता

साधारण सदस्यता	500/-
आजीवन सदस्यता	5,000/-

साहित्य सदस्यता

15 वर्ष	(केवल भारत में)	3,000/-

संघ केन्द्रीय कार्यालय के विभिन्न विभागों से कार्य सम्पादन हेतु सम्पर्क करें :-

E-mail : ho@sadhumargi.com

बैंक खाता विवरण

Shree Akhil Bharatvarshiya Sadhumargi Jain Sangh, Bikaner

State Bank of India

SCAN & PAY

Account No. : 31264126681
IFSC Code : SBIN0003401
Branch : G.S. ROAD, Bikaner
Mob. : 7073311108
E-mail : **accounts@sadhumargi.com**

व्हाट्सएप और ई-मेल आईडी

श्रमणोपासक	: 9799061990	news@sadhumargi.com
श्रमणोपासक समाचार	: 8955682153	
साहित्य	: 8209090748	: sahitya@sadhumargi.com
महिला समिति	: 6375633109	: ms@sadhumargi.com
समता युवा संघ	: 7073238777	: yuva@sadhumargi.com
धार्मिक परीक्षा	: 7231933008	examboard@sadhumargi.com
कर्म सिद्धांत	: 7976519363	
परिवारांजलि	: 7231033008	: anjali@sadhumargi.com
विहार	: 8505053113	: vihar@sadhumargi.com
पाठशाला	: 9982990507	: pathshala@sadhumargi.com
शिविर	: 7231833008	: udaipur@sadhumargi.com
ग्लोबल कार्ड अपडेशन	: 6265311663	: globalcard@sadhumargi.com
सामाजिक, संघ सदस्यता, सहयोग, समृद्धि, जन सेवा, जीव दया आदि अन्य प्रवृत्तियाँ		: 9602026899
शैक्षणिक, आध्यात्मिक, धार्मिक, साहित्य संबंधी प्रवृत्तियाँ		: 7231933008

-: सूचना :-

निवेदन है कि किसी भी कार्य के लिए संबंधित विभाग से ही संपर्क करें। इससे आपका कार्य सुगम और त्वरित गति से हो सकेगा।

कार्यालय समय – प्रातः 10:00 से सायं 6:30 बजे तक
लंच – दोपहर 1:00 से 1.45 बजे तक

आवश्यक सूचना

सभी संघ सदस्यों से निवेदन है कि कृपया कोई भी नकद भुगतान (Cash Payment) श्री संघ के किसी भी सदस्य, कार्यालय अधिकारी को किसी भी प्रवृत्ति में करें तो केन्द्रीय कार्यालय के लेखा विभाग (Accounts Department) को सूचना जरूर देवें। इससे आपको पक्की रसीद शीघ्र ही भिजवाई जा सकेगी।

मो.न. 7073311108 पर व्हाट्सएप करें।

जय गुरु नाना

जय महावीर

जय गुरु राम

YOUR TRUST

FLEXIBILITY IS OUR STRENGTH
RAKSHA
SHAND GROUP
SINCE 1977

RAKSHA PIPES

OUR GUARANTEE

INDIA'S MOST TRUSTED BRAND

FIRST IN INDIA

ISI FITTINGS WITH ADVANCED CO-MOULDED DURO RING SEAL

हु शि उ चौ श्री ज ग नाना,
राम चमकते भानु समाना।
तरुण तपस्वी, प्रशांतमना आचार्य प्रवर
1008 श्री रामलाल जी म.सा.
एवं समस्त चारित्रात्माओं के चरणों में
कोटिशः वंदन!

Sri Shantilal, Sanjay, Ajay & Tushar Shand

SHAND GROUP OF INDUSTRIES

No. 52, 7th Cross, Wilson Garden, Bengaluru - 560027.INDIA
Phone: +91-80-22235726, 22271902, 22225734.
Fax: +91-80-22234779. E-mail: mkt@shandgroup.com

RAKSHA FLO
P.T.M.T TAPS & ACCESSORIES

Diamond Duroflex · Diamond DUROLON · DURO RING · LEAK PROOF · NSF/ANSI/CAN 61 IAPMO · LEAD FREE · UV STABILIZED · Now with new M.R.O. Technology Resists high Impact · IS 15778 : 2007 CM/L NO : 2526149 · cftri CERTIFIED · LUCALOR FRANCE

www.shandgroup.com   रक्षा – जीवन भर की सुरक्षा   www.rakshapipes.com

रचनाकारों अथवा लेखकके विचारों से संपादक की सहमति होना अनिवार्य नहीं है। किसी भी विवाद की स्थिति में न्याय क्षेत्र बीकानेर ही रहेगा।

प्रधान सम्पादक, प्रकाशक, मुद्रक नरेन्द्र गांधी के लिए जैन आर्ट प्रेस, बीकानेर के लिए साक्षी प्रिंटर्स, जयपुर (राज.) में मुद्रित प्रतियाँ 25,000

प्रेषक : श्री अखिल भारतवर्षीय साधुमार्गी जैन संघ
समता भवन, आचार्य श्री नानेश मार्ग, नोखा रोड, गंगाशहर, बीकानेर-334401 (राज.), फोन नं. 0151-2270261

www.facebook.com/HOSadhumargi @absjainsangh